तौहीद

अल्लामा ज़ीशान हैदर जवादी



तौहीद



अल्लामा ज़ीशान हैदर जवादी

अनुवाद

अब्बास असग़र शबरेज़

किताबः	**तौहीद**
तक़रीरः	**अल्लामा ज़ीशान हैदर जवादी**
अनुवादः	**अब्बास असग़र शबरेज़**
पहला प्रिन्टः	**नवम्बर 2017**
तादादः	**2000**
पब्लिशरः	**ताहा फ़ाउंडेशन, लखनऊ**
प्रेसः	**न्यु लाइन प्रॉसेस, दिल्ली**
क़ीमतः	**40 रूपए**
कान्टेक्ट न०:	+91- 9956 62 0017 8127 79 3428



मुक़द्दमा

वालिदे अल्लाम सरकारे अल्लामा सैय्यद ज़ीशान हैदर जवादी (त.स.) की ज़िन्दगी का तमाम तर मक़सद ख़िदमते दीन था और उन्होंने अपनी ज़ाकिरी का रुख़ भी हमेशा इसी पैराए में क़ाएम रखा, कभी भी ज़ाकिरी को हुसूले दुनिया और अवाम की पसन्द से नहीं जोड़ा बल्कि हमेशा उन मौज़ूआत को उनवाने सुख़न क़रार दिया जिसकी एक इस्लामी मुआशरे को ज़रूरत होती है और हमेशा अपनी मजलिसों में तबलीग़ी पहलू को फ़ौक़ियत देते रहे।

आपका एक इम्तियाज़ यह भी रहा है कि आप ने अपनी ज़िन्दगी का एक अज़ीम हिस्सा मुत्तहेदा अरब अमारात (अबू ज़बि) में गुज़ारा जहाँ पर अहलेबैत[अ०] के चाहने वाले मुख़्तलिफ़ ज़बानों से ताल्लुक़ रखते थे और उन्होंने अपनी मजलिसों में किसी भी तबक़े को अपनी इल्मी सलाहियतों से महरूम नहीं किया और तक़रीबन 22 बरस तक अबू ज़बि के मरकज़े हुसैनी के पहले अशरे को ख़िताब करते रहे।

वालिदे अल्लाम त.स. के पहले अशरे का उनवान भी तौहीद था और आख़िरी अशरे का उनवान भी तौहीद ही क़रार पाया। चुनांचे आपके हाथों में जो किताब मौजूद है उसका उनवान भी तौहीद है और ज़िन्दगी की आख़िरी मजलिस को इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन की आय-ए-करीमा से ख़िताब करके अपने मालिके हक़ीक़ी की बारगाह में हाज़िर हो गए।

वालिदे अल्लाम की जुमला वसिय्यतों में एक वसिय्यत यह भी थी कि मेरी किताबों को शाया करके मंज़रे आम पर लाया जाता रहे।

चुनांचे आपकी किताबें मुख़्तलिफ़ इदारों के ज़रिये मंज़रे आम पर आती रहीं हैं और अब यह किताब हिन्दी ज़बान में शाया की जा रही है।

अल्लाह तआला ताहा फ़ाउण्डेशन के मेम्बरान को जज़ाए ख़ैर अता फ़रमाए जिन्होंने इस किताब की तबाअत की तमाम तर ज़िम्मेदारियाँ क़ुबूल की हैं और मुस्तक़्बिल में भी वालिदे अल्लाम की किताबों को हिन्दी ज़बान में शाया करते रहेंगे।

सै. जवाद हैदर जवादी
इदार–ए–नश्रो हिफ़्ज़े अफ़कारे अल्लामा जवादी
इलाहाबाद

Contents

(1)

कुछ बातें आयत के बारे में

> ऐ रसूल! कह दीजिए कि मैं तुम्हारे ही जैसा एक इन्सान हूँ मगर मेरे पास अल्लाह की तरफ़ से 'वही' आती है कि तुम्हारा मालिक और तुम्हारा पालने वाला बस एक है। जो अपने पालने वाले से मिलना चाहता हो उसे चाहिए कि अच्छे काम करे और अपने पालने वाले की इबादत[1] में किसी को हिस्सेदार न बनाए।[2]

इस आयत में अल्लाह ने इस्लाम के पाँचों उसूले दीन बता दिए हैं।

ऐ रसूल! कह दीजिए कि मैं तुम्हारे जैसा ही एक इन्सान हूँ जिसके पास अल्लाह की तरफ़ से 'वही[3]' आती है आयत यह वाला टुकड़ा नबुव्वत के अक़ीदे की तरफ़ इशारा है।

इसके बाद आयत ने तौहीद की बात की हैः *तुम्हारा अल्लाह बस एक है और उससे हटकर दूसरा कोई ख़ुदा नहीं है।*

---

[1] प्रार्थना

[2] सूरए कहफ़/110

[3] अल्लाह का मैसेज

इसके बाद क़यामत की बात हैः *जो अपने मालिक और अपने पालने वाले से मिलना चाहता है उसे चाहिए कि अच्छे काम करे और अपनी इबादत में किसी को उसका साथी न बनाए।*

साथ ही यहीं पर अद्ले इलाही (Devine Justice) की बात भी की गई हैः *जो अपने मालिक और अपने पालने वाले से मिलना चाहता है उसे चाहिए कि अच्छे काम करे* क्योंकि बुरे कामों और बुराईयों के साथ अल्लाह से कोई नहीं मिल सकता।

और इन सारे अक़ीदों की जान इमामत है।

अब आइए! इस आयत पर ज़रा एक नज़र डालते हैं।

सब से पहले अल्लाह ने कहा कि ऐ रसूल! आप कह दीजिए कि मैं तुम्हारे ही जैसा एक इन्सान हूँ।

अगर रसूल[स०] हमारे ही जैसे इन्सान हैं और यही एलान करना था तो फिर अल्लाह से कहलवाने की क्या ज़रूरत थी? जैसे किसी आदमी से पूछा जाए कि आप पत्थर हैं या पेड़ या जानवर या इन्सान और वह कहे कि ठहर जाइए! पहले 'वही' आ जाए तब बताऊँगा। अगर कोई अपनी पोस्ट का एलान करना चाहे तो इस काम के लिए तो हो सकता है कि इजाज़त चाहिए हो लेकिन अगर यही एलान करना है कि मैं आदमी हूँ तो यह तो हर एक देख ही रहा है। इसके लिए किसी 'वही' की क्या ज़रूरत है मगर फिर भी अल्लाह ने अपने रसूल से अपने इन्सान होने का एलान करवाया कि कह दीजिए! मैं तुम्हारे ही जैसा एक इन्सान हूँ।

अगर रसूले इस्लाम[स०] अपनी नबुव्वत का एलान करते तो बात समझ में आती है क्योंकि अल्लाह की इजाज़त के बिना कोई नबी नहीं हो सकता लेकिन अपने इन्सान होने का एलान करना और वह भी अल्लाह कहलवा रहा है कि कह दीजिए। देखा जाए तो यहाँ ''आप कह दीजिए'' का कोई काम नहीं था।

फिर भी अल्लाह ने कहलवाया ताकि बन्दों को पता चल जाए कि हमारे और रसूल[स०] के इन्सान होने में इतना फ़र्क़ है कि हम जो चाहें अपनी मर्ज़ी से कर सकते हैं मगर रसूल[स०] तो अपनी मर्ज़ी से अपने आप को इन्सान भी नहीं कह सकते। जब अल्लाह कहलवाएगा बस तभी कह सकते हैं।

"मैं तुम्हारे जैसा ही इन्सान हूँ और मेरे पास अल्लाह की 'वही' आती है कि तुम्हारा अल्लाह बस एक है।" अरबी ग्रॉमर के हिसाब से आयत का सही मतलब यह है कि मेरे पास *बराबर* 'वही' आती रहती है कि तुम्हारा अल्लाह बस एक है।

बार-बार वही क्यों आ रही है? जबकि हमें तो बचपन में एक बार ही बता दिया गया था कि अल्लाह एक है जो हमें आज तक याद है। ऐसा तो नहीं होता कि माँ हर दिन अपने बच्चे से कहती हो कि बेटा! कहो कि अल्लाह एक है। अगले साल फिर याद दिलाती हो कि अल्लाह एक है। दस साल बाद फिर सिखाए कि अल्लाह एक है। बार-बार यह बात नहीं दोहराई जाती है मगर अल्लाह अपने रसूल से बार-बार कह रहा है और वह भी वही के रास्ते से कि अल्लाह एक है। सवाल यह है कि इस बारे में बार-बार अल्लाह अपने रसूल से क्यों कह रहा है। इस में कुछ न कुछ बात तो ज़रूर होगी। अगर अकेले अल्लाह और उसके रसूल के बीच की बात होती तो कह दिया जाता कि *मेरे पास वही आई कि अल्लाह एक है* मगर मामला कुछ और है।

मामला यह है कि हम में और अल्लाह के रसूल[स०] में फ़र्क़ है। हमें बनाया तो हमारे हिसाब से बनाया और उन्हें बनाया तो उनके हिसाब से बनाया यानी हम आम लोग कोई भी काम कभी भी कर देते हैं जैसे हंसने की जगह हो या न हो मगर हंस देते हैं, रोने की जगह हो या न हो रो देते हैं, जहाँ उठना चाहिए था वहाँ बैठ जाते हैं और जहाँ बैठना चाहिए था वहाँ उठ जाते हैं यानी आम इन्सान कभी अपनी मर्ज़ी से काम करता है और कभी अल्लाह की मर्ज़ी के हिसाब से। कभी अल्लाह की बात मान ली और कभी अपने दिल की बात लेकिन उधर बार-बार यह मैसेज आ रहा है कि ऐ मेरे रसूल! अल्लाह है। इन सब को समझाते रहिए कि अल्लाह एक है। वही के बार-बार आने का मतलब यह है कि अल्लाह के रसूल[स०] की सारी ज़िन्दगी पर वही का पहरा है। अगर अल्लाह की वही के पहरे से ज़िन्दगी हट जाए तो कभी अल्लाह की मर्ज़ी से काम होगा और कभी अपनी मर्ज़ी से। लेकिन अगर किसी की ज़िन्दगी पर हर पल वही का पहरा लगा हुआ होगा तो उसकी एक साँस भी अल्लाह की मर्ज़ी से हटकर

नहीं आ-जा सकती। जागेगा-सोएगा तो अल्लाह की मर्ज़ी से, बोलेगा तो अल्लाह की मर्ज़ी से, चुप रहेगा तो अल्लाह की मर्ज़ी से, जंग करेगा तो अल्लाह की मर्ज़ी से यानी उसका हर काम बस अल्लाह की मर्ज़ी से ही होगा।

यही अल्लाह के रसूल[स०] की सब से ख़ास बात है जो दूसरे किसी आदमी के अंदर नहीं है।

अल्लाह का हुक्म था कि आप कह दीजिए कि अल्लाह एक है और रसूल[स०] जब तक इस्लाम को फैलाते रहे यानी 23 साल तक बराबर इस बात को दोहराते रहे। जबकि अल्लाह की तौहीद इन्सान के नेचर में रख दी गई है और उसे इस अक़ीदे के साथ ही इस दुनिया में भेजा गया है लेकिन उधर से हुक्म हो रहा है कि आप कह दीजिए कि अल्लाह एक है। इसका मतलब यह है कि इस्लाम फैलना शुरू हो रहा है ''कह दीजिए'' से। पहले दिन जब अल्लाह ने अपनी तौहीद का एलान कराया तो कहा कि कह दीजिए कि अल्लाह एक है ताकि सब को पता चल जाए कि यह बात रसूल[स०] ने अपने दिल से नहीं कही है। अल्लाह ने कहलवाया है तो रसूल[स०] ने कहा है।

बहरहाल जब इस्लाम फैलना शुरू हुआ तो सब से पहले इस्लाम का पहला अक़ीदा यानी तौहीद पहचनवाया गया। यही वह अक़ीदा है जिस पर सारा इस्लाम टिका हुआ है। इस्लाम के दूसरे अक़ीदे इसी तौहीद का चक्कर लगाते हैं। अगर कोई काम या कोई अक़ीदा तौहीद की धुरी से हट जाए तो फिर न इस्लाम बचेगा और न इस्लाम से हमारा कोई रिश्ता।

इस्लाम का असली अक़ीदा एक है क्योंकि इस दुनिया को बनाने वाला भी बस एक ही है। दूसरे जो भी हैं, छोटे-बड़े सब के सब अल्लाह के बनाए हुए हैं। उनमें अल्लाह कोई नहीं है। न ही कोई रसूल ख़ुदा है और न कोई इमाम, न कोई बादशाह ख़ुदा है न कोई राजा, न कोई छोटा न कोई बड़ा। कोई ख़ुदा नहीं है। ख़ुदा बस एक है, दूसरे सब अल्लाह के बनाए हुए हैं।

अब इस्लाम को मानना है तो सब से पहले ख़ुदा को एक मानना होगा।

जब रसूल[स०] अल्लाह का पहला मैसेज लेकर लोगों के बीच आए थे तो सब से पहले कहा थाः

क़ूलू ला इलाहा इल-लल्लाह

सब कहो! अल्लाह के सिवा कोई ख़ुदा नहीं है।

यहाँ भी ''कहो'' आया है। इसका मतलब यह है कि इस्लाम की शुरूआत ही ''कहो'' से हुई है। अल्लाह ने कहा कि ऐ रसूल कह दीजिए और रसूल ने कह दिया। अब जो-जो अल्लाह कहता जाएगा वैसा-वैसा रसूल[स०] भी कहते जाएंगे।

जब इस्लाम को फैलाना शुरू किया तो तब भी अल्लाह ने अपने रसूल[स०] से ''कहो'' कहलवाया और जब काम ख़त्म हो गया और *उजरत* (बदला) देने का वक़्त आया तो तब भी रसूल[स०] ने अपनी तरफ़ से कुछ नहीं कहा बल्कि कहा कि जिसने मुझे इस काम पर लगाया है वही मेरी *उजरत* भी तय करेगा जिसके बाद क़ुरआन की आयत आ गईः

> ऐ रसूल! अगर यह लोग *उजरत* देना चाहते हैं तो कह दीजिए कि मुझे कोई बदला या मज़दूरी नहीं चाहिए। अगर कुछ देना ही चाहते हो तो बस मेरे अक़रबा (अहलेबैत[अ०]) से मोहब्बत करो।

इसी लिए जितने भी नबी आए सब ने यही कहाः

मेरी उजरत अल्लाह के ऊपर है।[1] यानी न तुम लोगों ने मुझ से काम लिया और न मैंने तुम्हारे लिए काम किया है। जिसके लिए काम किया है वह ख़ुद ही मज़दूरी भी दे देगा।

मगर मामला यह है कि नबी को जाना था और इस्लाम को रहना था। अब अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] को वापस जाना है और उनके सामने दो बातें हैंः एक तो यह कि पिछले 23 साल में जो इतनी मेहनत की है उसका क्या होगा और दूसरे जो क़ानून वह लेकर आए थे उसका क्या होगा? दूसरे नबियों के सामने क़ानून के बारे में सोचने का मामला नहीं था क्योंकि जो भी नबी गया उसे पता था कि मेरे बाद भी दूसरे नबियों को आना है और वह लाए हुए क़ानून को आगे लेकर जाएंगे।

---

1 सूरए यूनुस/72

हज़रत आदम[अ०] गए तो हज़रत नूह[अ०] आ गए, हज़रत नूह[अ०] गए तो हज़रत इब्राहीम[अ०] आ गए, फिर हज़रत इब्राहीम[अ०] गए तो हज़रत मूसा[अ०] आ गए, हज़रत मूसा[अ०] गए तो हज़रत ईसा[अ०] आ गए और आख़िर में हज़रत ईसा[अ०] गए तो हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[अ०] आ गए। और इन पाँचों को मिलाकर कुल एक लाख चौबीस हज़ार नबी आए। अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] तक उधर से भेजे हुए क़ानून के लिए कोई ख़तरा नहीं था क्योंकि एक के बाद एक नबी आते जा रहे थे मगर अब मामला दूसरा था। इसीलिए अल्लाह ने कहा कि अब जब उजरत की बात आ ही गई है तो ऐ रसूल! कह दीजिए कि बस इतना करो कि मेरे अहलेबैत से मोहब्बत करो। इसका मतलब यह है कि अगर अल्लाह का क़ानून बचा रहेगा तो बस अल्लाह के रसूल[स०] के अहलेबैत[अ०] से मोहब्बत की छाओं में बच सकेगा।

यह अल्लाह के रसूल[स०] की मेहनतों का बदला नहीं है बल्कि यह अल्लाह के क़ानून के बचे रहने का रास्ता है। तभी तो कहा था कि मेरे अहलेबैत[अ०] से मोहब्बत करो क्योंकि मेरा दीन इन्हीं के बीच बचा रह सकेगा। अगर इन से जुड़े रहे तो मेरे दीन से भी जुड़े रहोगे और अगर इन्हें छोड़ दिया तो दीन ही मिट जाएगा।

इतिहास से यह बात साबित है कि अगर इस्लाम अपनी असली शक्ल में बचा है तो बस वही इस्लाम बचा है जो अहलेबैत[अ०] वाला इस्लाम है जिसका सब से बड़ा सुबूत यह है कि अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] से पहले जितने भी नबी अल्लाह का क़ानून लेकर आए उन में से कोई भी अपनी असली शक्ल में नहीं बच सका और पहले के किसी क़ानून को बचे रहने की ज़रूरत भी नहीं थी। जब उस क़ानून का वक़्त ही तय था तो उसे बचाए रखने की ज़रूरत ही नहीं थी। अगर किसी पिछले क़ानून का असर रह भी गया तो उसकी भी शक्ल बदल गई। हम ने माना कि हज़रत नूह[अ०] जो क़ानून लेकर आए थे वह हमें नहीं मिलता कि कहाँ है या हज़रत इब्राहीम[अ०] जो क़ानून लेकर आए थे उसके बारे में भी कुछ नहीं पता कि कहाँ है लेकिन हज़रत मूसा[अ०] और हज़रत ईसा[अ०] जो क़ानून लाए थे उसका

असर तो बहरहाल बाक़ी है, तौरैत और बाइबिल के रूप में। यह बात यहूदी भी जानते हैं और ईसाई भी कि यह वह तौरैत या बाइबिल नहीं है जो हज़रत मूसा[अ०] या हज़रत ईसा[अ०] लेकर आए थे। इसका मतलब यह है कि जितनी भी आसमानी किताबें आईं उनमें से कोई भी नहीं बची और यह उन किताबों की कमज़ोरी नहीं है बल्कि अगर अल्लाह उन किताबों को भी बचाना चाहता तो बचा सकता था। किसी में भी इतनी ताक़त नहीं थी कि उन किताबों को मिटा देता मगर अल्लाह उन किताबों को बचाकर रखना ही नहीं चाहता था। अगर रखना होता तो फिर बदलता क्यों? अगर अपने क़ानून को आगे चलकर बदलना है तो इसका मतलब बस यही बनता है कि पिछले वाले को बचाकर नहीं रखना है।

अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] जो शरीअत लेकर आए थे उसके दो हिस्से हैंः एक क़ुरआन और दूसरे हदीस। क़ुरआन अल्लाह की किताब है जिसके लिए ख़ुद क़ुरआन में अल्लाह का वादा है कि हम इसको बचाकर रखेंगे। इसीलिए क़ुरआन में आज तक कोई ज़रा सा भी इधर-उधर नहीं कर सका क्योंकि अल्लाह उसे बचाने वाला है।

अब बची हदीस और यही वह जगह थी कि जहाँ लोगों के हाथ पहुँचने लगे। जब तक रसूले इस्लाम[स०] दुनिया में रहे वह ख़ुद ही अपना कैरेक्टर दुनिया वालों के सामने रखते रहे। किस में हिम्मत थी जो कह देता कि ग़लत है। किस में इतनी ताक़त थी जो यह कह देता कि आप जो कहें वह क़ानून नहीं है बल्कि हम जो कहें वह क़ानून है। इसलिए लोगों ने वक़्त के बीतने का इन्तेज़ार किया। जैसे ही रसूले इस्लाम[स०] दुनिया से गए वैसे ही हदीसें गढ़ी जाने लगीं। अब हर हदीस रसूल की हदीस हो गई थी यानी जैसे पिछली आसमानी किताबें बदल दी गई थीं वैसे ही अब अल्लाह के रसूल[स०] की सीरत (कैरेक्टर) भी बदली जाने लगी जिससे हदीसें भी नहीं बची रह सकीं क्योंकि अब उन में भी बहुत कुछ ग़लत-सलत मिला दिया गया था। बाद में जब उलमा आए और उन्होंने देखा कि हदीसें वक़्त के हिसाब से जवाब नहीं दे पा रही हैं तो उन्होंने भी बहुत कुछ मिला दिया। इतना सब

कुछ होने के बाद जो शरीअत सामने आई वह बिल्कुल वैसे ही थी जो पिछली वाली किताबों का हाल हुआ था। फ़र्क़ बस यह है कि कल तौरैत या बाइबलि में आयतें बढ़ा दी गई थीं मगर क़ुरआन के साथ-साथ रसूल[स०] की हदीसों में भी कुछ नहीं घटाया-बढ़ाया जा सका लेकिन इतना ज़रूर हुआ कि रसूल[स०] के नाम पर हदीसें गढ़ी जाने लगीं और जब गढ़ने से भी काम नहीं चल सका तो उलमा ने अपनी समझ और सोच को भी शरीअत में मिला दिया यानी सब कुछ गुड-मुड कर दिया गया।

इसका मतलब यह है कि क़ुरआन से हटकर एक भी जगह ऐसी नहीं मिलती जहाँ कोई कह सके कि यह अल्लाह का असली क़ानून है जिसमें बाहर से कुछ भी नहीं मिलाया गया है। अगर कोई जगह ऐसी मिली तो वह बस एक है और वह अहलेबैत[अ०] का घराना जिन्होंने हमेशा यही कहा कि अल्लाह के दीन में हमारा कोई हिस्सा नहीं है। हम ने बस वह कहा है जो हमारे वालिद ने कहा, उन्होंने वह कहा जो उनके वालिद ने कहा, उन्होंने वह कहा जो उनके वालिद ने कहा। इसी तरह पीछे जाते हुए उन्होंने वह कहा जो हज़रत अली[अ०] ने कहा और हज़रत अली[अ०] ने वह कहा जो अल्लाह के रसूल[स०] ने कहा। अल्लाह के रसूल[स०] ने वह कहा जो अल्लाह की तरफ़ से हज़रत जिब्रील लेकर आए थे। अगर इतिहास की इस सच्चाई पर ध्यान दे दिया जाए तो अपने आप समझ में आ जाएगा कि अगर दीन कहीं बचा रह गया है तो वह बस आले मोहम्मद[अ०] का सिखाया हुआ दीन है।

बहरहाल इस्लाम आया तो अल्लाह ने पहले ही दिन अपने रसूल से एलान करा दिया कि कह दीजिए कि अल्लाह एक है ताकि सारी दुनिया को पता चल जाए कि यह नबी का अपना बनाया हुआ अक़ीदा नहीं है बल्कि यह अल्लाह का एलान है।

इसके बाद जब अल्लाह के रसूल[स०] ने अपनी नबुव्वत का एलान किया तो फिर यही कहा कि मैं तुम्हारे ही जैसा इन्सान हूँ लेकिन मेरी तरफ़ अल्लाह की वही आती है।

इस्लाम में कुछ भी अल्लाह के रसूल[स०] का बनाया हुआ नहीं है। जो कुछ भी है वह सब अल्लाह का बनाया हुआ है, अल्लाह

के रसूल[स०] ने बस उसका एलान किया है। अल्लाह ने अपने रसूल[स०] से बार-बार इसी लिए ''कह दीजिए'' कहलवाया ताकि सब समझ जाएं कि बात किसी की है और पहुँचाने वाला कोई और है।

इस आयत के आख़िर में हैः

ख़बरदार! अल्लाह की इबादत में किसी को भी हिस्सेदार न बनाना।

उलमा ने इस आयत के बारे में बात करते हुए लिखा है कि अल्लाह के रसूल[स०] के पास एक आदमी आया जो मुसलमान था और ख़ाली मुसलमान ही नहीं था बल्कि रसूल[स०] का सहाबी भी था। उसने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! मैं नेक काम करता हूँ, नमाज़ भी पढ़ता हूँ, रोज़े भी रखता हूँ और वह सब करता हूँ जो आपने बताया है और इन कामों की वजह से लोग मेरी तारीफ़ करते हैं जो मुझे अच्छी भी लगती है। क्या अपनी इस तारीफ़ पर ख़ुश होना बुरी बात है?

उस ने सवाल किया और उधर से अल्लाह की वही आ गई कि ऐ रसूल! कह दीजिए कि अगर मुझे मुँह दिखाना चाहते हो और क़यामत में मुझ से मिलना हो तो वह नेक काम करना जिसमें कोई दूसरा मेरा हिस्सेदार न हो। अगर दिल में बन्दों की तारीफ़ का ख़याल भी आ गया तो मैं ऐसे किसी भी काम के साथ किसी भी बन्दे से नहीं मिलूँगा।

इसी लिए हमारे यहाँ रियाकारी (दिखावे) को शिर्क कहा गया है। अगर कोई आदमी लोगों को दिखाने ओर उन्हें ख़ुश करने के लिए अच्छे काम करे तो वह ज़ाहिर में तो मुसलमान होगा लेकिन अंदर से मुश्रिक[1] होगा।

असल में बात यह है कि जब बन्दा यह चाहता है कि उसके किसी काम से अल्लाह भी ख़ुश हो जाए और अल्लाह के साथ-साथ बन्दे भी ख़ुश हो जाएं तो अल्लाह कहता है कि मुझे ऐसा काम नहीं चाहिए यानी अगर किसी ने कोई काम मेरे लिए भी किया और किसी दूसरे के लिए भी किया तो मैं अपने हिस्सेदार पर ज़ुल्म नहीं करना चाहता बल्कि मैं अपना हिस्सा भी

---

[1] शिर्क करने वाला

अपने हिस्सेदार को दे देता हूँ। अगर कोई आदमी दो रकअत नमाज़ पढ़े और उसके दिमाग़ में अल्लाह भी हो और कोई बन्दा भी हो तो ऐसे मामले में अल्लाह कहता है कि चूँकि तुम ने यह काम दोनों के लिए किया है इसलिए अगर तुम होते तो सारी नमाज़ अपनी तरफ़ खींच लेते और अपने हिस्सेदार को कुछ भी न देते मगर मेरा करम यह है कि मैं ऐसी सारी नमाज़ उसी को दे देता हूँ जिसके लिए तुम ने नमाज़ पढ़ी थी। अब जब क़यामत में बन्दा आएगा और कहेगा कि ऐ अल्लाह! मैंने दो रकअत नमाज़ पढ़ी थी तो अल्लाह कहेगा कि हाँ! मुझे पता है लेकिन तुम ने जो नमाज़ पढ़ी थी उसमें तुम्हारे दिल में मेरे साथ-साथ कोई दूसरा भी था। मैं नहीं चाहता था कि उस पर कोई ज़ुल्म हो, इसलिए मैंने सारी नमाज़ उसी के नाम कर दी है। उसके पास जाओ और उसी से ले लो। अगर जन्नत उसके पास हो तो उसी से ले लो क्योंकि तुम ने नमाज़ भी तो उसी के लिए पढ़ी थी। फिर बन्दा कहेगा कि ऐ पालने वाले! उसके पास तो कुछ भी नहीं है। भला उससे क्या ले लूँ ? अल्लाह कहेगा कि अब यहाँ आकर तुम्हारी समझ में आ रहा है कि उसके पास कुछ भी नहीं है। उसे ख़ुश करने के लिए नमाज़ पढ़ते वक़्त समझ में नहीं आया था ?

इसी लिए तो क़ुरआन में है कि *ख़बरदार! इबादत में किसी को अल्लाह का हिस्सेदार न बनाना* वरना अल्लाह ख़ुद ही सब कुछ उठाकर उसे दे देगा। इसलिए जो काम भी किया जाए बस अल्लाह को ध्यान में रखकर किया जाए वरना क़यामत में कोई काम हमें फ़ाएदा नहीं पहुँचाएगा।

(2)

तौहीद क्यों ज़रूरी है?

सब से बड़ा सवाल यह है कि इस्लाम में तौहीद की जगह कहाँ है? इतनी सी बात तो बच्चे भी जानते हैं कि जब उसूले दीन की बात होती है तो सब से पहले तौहीद की बात होती है। इस्लाम में उसूले दीन तीन हों या पाँच, हर अक़ीदे (Belief) की बुनियाद अल्लाह की तौहीद पर है। इसलिए इस बात को नहीं नकारा जा सकता कि इस्लाम में तौहीद सब से पहले और सब से ऊपर है।

सही बात यह है कि इस्लाम के हर क़ानून, हर मामले और हर बात का सेंटर तौहीद ही है। यह सारी दुनिया उसी एक अल्लाह की बनाई हुई है और यहाँ सब कुछ बस उसी की मर्ज़ी से चल रहा है। कौन सी चीज़ है जो अल्लाह से दूर होकर बची रह जाए और कौन सी चीज़ है जिसे अल्लाह के मुक़ाबले में रख दिया जाए? इसीलिए हम देखते हैं कि जितनी भी मुक़द्दस (पवित्र) चीज़ें हैं वह बस इसीलिए मुक़द्दस हैं क्योंकि वह अल्लाह से जुड़ी हुई हैं। अगर हम ने अल्लाह के रसूल[स०] का कलमा पढ़ा है तो यह कहके पढ़ा हैः

اَشھدُ اَنَّ مُحَمَّداً رَّسُولُ اللهِ

मैं गवाही देता हूँ कि मोहम्मद[स०] अल्लाह के रसूल हैं।

अगर हम ने अल्लाह के किसी वली की विलायत को माना है तो इस वजह से कि वह अल्लाह का वली है और उसका रिश्ता अल्लाह से है। अगर हम ने किसी किताब को अपनी आँखों से लगाया है तो बस इसलिए क्योंकि वह किताब अल्लाह की किताब है। अगर हम ने किसी घर का तवाफ़ किया है तो बस इसलिए क्योंकि वह घर अल्लाह का घर है। इनमें से हर चीज़ का रिश्ता अल्लाह से है। इसका मतलब यह है कि जो चीज़ अल्लाह से जुड़ जाए वह पवित्र हो जाती है।

बहरहाल तौहीद हमारे हर अक़ीदे (आस्था) और हमारे हर काम की जान है। इसलिए अगर किसी आदमी ने अल्लाह की तौहीद को नहीं पहचाना तो उसने दीन-धर्म की असलियत को भी नहीं पहचाना है। आज मुस्लिम समाज की कमज़ोरियों में से एक बड़ी कमज़ोरी यह है कि हर मुसलमान नाम भर का मुसलमान भी है और तौहीद को मानने वाला भी है।

तौहीद की असलियत क्या है? तौहीद कहते किसे हैं? तौहीद के मायनी क्या हैं? कितने मुसलमान हैं जो तौहीद का मतलब समझते हैं? अगर हम ध्यान दें तो अपने आप समझ में आ जाएगा कि शायद अकसर मुसलमान ऐसे हैं जो तौहीद का मतलब भी नहीं जानते। जो तौहीद को ही नहीं जानता वह रिसालत को भी नहीं पहचान सकता? जो रिसालत को नहीं पहचानेगा वह इस्लाम के दूसरे मामलों को भी नहीं पहचान पाएगा?

अगर हम अल्लाह की तौहीद को पहचानना चाहते हैं तो बस बात को समझने के लिए यही बहुत है कि नहजुल बलाग़ा में इमाम अली[अ०] का पहला ख़ुतबा ही तौहीद से शुरू होता है और इस दुनिया में हज़रत अली[अ०] से अच्छा न किसी ने अल्लाह को पहचाना है और न पहचनवाया है। अल्लाह के रसूल[स०] के बाद अगर कोई इन्सान ऐसा पैदा हुआ है जिसने अपने मालिक को

पहचाना है और सारी दुनिया को पहचनवाया भी है तो वह हज़रत अली[अ०] से हटकर और कोई नहीं है। यह बात आस्था और मोहब्बत की वजह से नहीं कही जा रही है बल्कि सारी दुनिया में जितने भी बड़े-बड़े उलमा और स्कॉलर पैदा हुए हैं, चाहे वह मुसलमान हों या मुस्लिम जगत से बाहर वाले, सब की बातें पढ़ने के बाद समझ में आता है कि किसने अपने अल्लाह को कितना पहचाना है और किसने अपने मानने वालों को क्या और कैसा सिखाया है। इतिहास के पन्नों में सारी बातें लिखी हुई हैं। उन सब बातों को पढ़ने के बाद यही समझ में आता है कि जिस तरह हज़रत अली[अ०] ने अल्लाह को पहचाना और पहचनवाया है उस तरह अल्लाह को पहचानने वाला न कोई पैदा हुआ है और न होगा।

हज़रत अली[अ०] ने जब दीन के मायनी बताए तो यह फ़रमाया थाः

दीन शुरू होता है अल्लाह को पहचानने से।

इसका मतलब यह है कि अगर किसी ने अल्लाह को न पहचाना तो अभी वह दीन के अन्दर आया ही नहीं है, दीनदार होना तो बहुत बाद की बात है। इसके बाद हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैंः

पहचानने का कमाल *तसव्वुर* नहीं है बल्कि *तसदीक़* है।

अल्लाह को हर समाज मानता है। यहाँ तक कि ख़ुद क़ुरआन ने भी कहा है कि अगर आप उनसे पूछेंगे कि ज़मीन और आसमानों को किसने बनाया है तो वह सब कहेंगे कि अल्लाह ने। इसका मतलब यह हुआ कि अगर काफ़िरों से भी पूछा जाए कि ज़मीन और आसमान को किसने बनाया है तो फ़ौरन कह देंगे कि अल्लाह ने। इसलिए इस सवाल का बस एक ही जवाब है और वह है अल्लाह। दुनिया को किसने बनाया है? मजबूर होकर आदमी यही कहेगा कि अल्लाह ने। इसका मतलब यह हुआ कि अल्लाह को तो हर आदमी मानता है और अल्लाह हर समाज में पाया जाता है लेकिन बस इस मानने से कोई अल्लाह को पहचानने वाला नहीं बन सकता है। पहचानने का कमाल *तसव्वुर*

नहीं है बल्कि *तसदीक़* है यानी जो कहा है बस वही मानो। जो बात ज़बान पर आई है और जो सोच दिमाग़ में चल रही है बस उसी बात और उसी सोच को अपने दिल में बिठाओ।

तसदीक़ का कमाल ही यह है कि उसे एक माना जाए।

इसका मतलब यह है कि अगर किसी आदमी के दिमाग़ में दो-चार ख़ुदाओं की तस्वीर आती है तो ऐसा आदमी अभी *तसदीक़* तक नहीं पहुँच पाया है और जो *तसदीक़* तक नहीं पहुँच पाया वह पहचान ही नहीं पाया है और जो पहचान नहीं पाया है वह अभी दीन के अन्दर ही नहीं आया है। इसका सीधा सा मतलब बस यही बनता है कि पूरे का पूरा इस्लाम बस तौहीद पर टिका हुआ है।

आज अगर हम दुनिया के किसी मुसलमान या इस्लाम के बारे में जानने वाले किसी आदमी से पूछें कि आपके मुसलमान होने की पहचान क्या है? आपके तौहीद के अक़ीदे की पहचान क्या है तो हर मुसलमान कहेगा कि कलमा यानी *ला इलाहा इल-लल्लाह*। इसका मतलब यह है कि मुसलमान के पास जो तौहीद का अक़ीदा है उसके दो टुकड़े हैं: एक टुकड़ा *ला इलाहा* और दूसरा टुकड़ा *इल-लल्लाह* है। अब अगर कोई आदमी अल्लाह को तो मानता हो मगर उसके अन्दर ग़लत ख़ुदाओं को ठुकराने की हिम्मत न हो तो ऐसा आदमी तौहीद वाला नहीं हो सकता। इसी तरह अगर कोई आदमी ग़लत ख़ुदाओं को ठुकराने की हिम्मत तो रखता हो लेकिन अल्लाह के सामने अपना सर नहीं झुकाता तो वह भी तौहीद को मानने वाला नहीं हो सकता। तौहीद उसी वक़्त पूरी होती है जब ग़लत को ठुकरा दिया जाए और हक़ (सही) के सामने सर झुका दिया जाए।

अब आइए! तौहीद के मायनी को समझते हैं। तौहीद अरबी शब्द है। इसके आम मायनी अलग हैं और जो मायनी हमारे दिमाग़ में आते हैं वह अलग हैं। अरबी में जब कोई शब्द इस वज़न के साथ बोला जाता है तो उसका मतलब होता है कोई काम करना जैसे कोई चीज़ आपके हाथ में है और आप चाहते हैं कि उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाएं तो अरबी में इसके लिए *तक़तीअ़* बोला जाता है। इस तरह के जितने भी शब्द बोले

जाएंगे उनके मायनी यही निकल कर आएंगे जैसे *तक़्तीअ़* के मायनी टुकड़े-टुकड़े करने और *तक़्तील* के मायनी क़तल करने के हैं लेकिन तौहीद के मायनी एक बनाने के नहीं हैं। अल्लाह के बारे में तौहीद का मतलब यह नहीं है कि ख़ुदा थे तो बहुत सारे मगर हम ने सब को जमा करके एक बना दिया है। ऐसा बिल्कुल नहीं है।

फिर तौहीद का मतलब क्या है? इस बात को एक मिसाल से समझते हैं। हम मुसलमानों के बीच एक शब्द बोला जाता है जिसका नाम है "तौहीदे कलमा" जिसका मतलब यह लिया जाता है कि सारे मुसलमानों की बात एक हो जाए यानी सब की बात को एक बना दिया जाए। यह बात तो समझ में आती है लेकिन जब यह शब्द अल्लाह के बारे में बोला जाता है तो कोई नहीं कह सकता कि तौहीद के मायनी कई ख़ुदाओं को मिलाकर एक ख़ुदा बनाना हैं।

इसी तरह *तकबीर* भी है। अरबी में *तकबीर* का मतलब होता है "बड़ा बनाना" लेकिन जब यह *तकबीर* शब्द अल्लाह के बारे में बोला जाता है तो इसके मायनी यह नहीं होते कि बन्दे ने अल्लाह को बड़ा बना दिया है। इसका मतलब यह हुआ कि न हम ने अल्लाह को तौहीद में एक बनाया है और न तकबीर में उसे बड़ा बनाया है और न हम ने उसे तस्बीह में पाक बनाया है। हम ने कुछ नहीं बनाया है। हम ने बस यह किया है कि वह जैसा था बस उसके वैसा होने का एलान कर दिया है।

इस बात को हम इस तरह से भी कह सकते हैं कि तौहीद शब्द जब बन्दों के लिए बोला जाता है तो इसका मतलब यह होता है कि सारे झगड़ों को मिटाकर एक बना दिया जाए यानी वही *तौहीदे कलमा* लेकिन यही शब्द जब अल्लाह के लिए बोला जाता है तो हम अल्लाह को एक नहीं बनाते हैं बल्कि वह तो पहले से ही एक ही था। हम ने बस उसके एक होने का एलान किया है। इसी तरह *तकबीर* है कि हम ने *तकबीर* कहकर उसे बड़ा नहीं बनाया बल्कि उसके बड़े होने का एलान किया है। वह पाक था, हम ने *तस्बीह* में उसके पाक होने का एलान किया है। वह अकेला था, हम ने *ला इलाहा इल-लल्लाह* कहकर उसके एक

होने का एलान किया है। इसका मतलब यह है कि यह शब्द कभी काम करने के मायनी में इस्तेमाल होता है और कभी एलान करने के मायनी में यानी ज़बान से कह दिया जाए, उतना ही बहुत है।

जब हज़रत इब्राहीम[अ०] और हज़रत इस्माईल[अ०] ने मिलकर अल्लाह का घर बनाया तो अल्लाह ने कहाः

> ऐ रसूल! उस वक़्त को याद कीजिए जब इब्राहीम और इस्माईल मिलकर अल्लाह के घर की दीवारें उठा रहे थे।

बनाने वाला कौन है? यह भी नबी और वह भी नबी। यह भी मासूम और वह भी मासूम। अगर किसी तीसरे का हाथ लगा है तो अल्लाह के फ़रिश्ते जिब्राईल का और वह भी मासूम यानी तीनों मासूम। यह तीन मासूमों का बनाया हुआ घर है।

इसके बाद अल्लाह फ़रमाता हैः

> हम ने इब्राहीम और इस्माईल से वादा करवाया कि घर तो बन गया है लेकिन अब मेरे घर को पाक भी बनाओ।

क़ुरआन की इस आयत में *ततहीर* शब्द आया है और *ततहीर* का मतलब पाक करना होता है। सवाल यह है कि अल्लाह के घर में निजासत कहाँ से आ गई? मआज़ल्लाह इब्राहीम[अ०] के हाथों से? इस्माईल[अ०] के हाथों से? जिब्राईल[अ०] के हाथों से?

फिर इस पाक करने का क्या मतलब है? अब सब सोच रहे हैं कि देखें इब्राहीम[अ०] क्या पाक करने वाले हैं क्योंकि यह घर तो पहले से ही पाक है मगर जब तौहीद को पहचान लिया तो यह मामला भी साफ़ हो गया कि जैसे तौहीद दो-चार को एक बनाना नहीं है बल्कि अल्लाह के एक होने का एलान करना है, ठीक उसी तरह यहाँ *ततहीर* का मतलब नजिस चीज़ को पाक बनाना नहीं है बल्कि इस घर के पाक होने का एलान करना है।

अल्लाह के एक होने को मानना और इसका एलान करना, यही हमारा अक़ीदा (Belief) है यानी तौहीद का अक़ीदा।

अल्लाह के बड़ा होने का एलान ही हमारी *तकबीर* है। भला इससे हटकर हम बना भी क्या सकते हैं।

हमें तौहीद को वैसे ही पहचानना चाहिए जैसा अल्लाह ने अपने एक होने को पहचनवाया है। पहले दिन जब अल्लाह ने अपने एक होने का एलान किया तो अपने रसूल से कहा थाः

ऐ रसूल! कह दीजिए कि अल्लाह एक है।[1]

मगर वह कैसा एक है क्योंकि जिसे हम *एक* कहते हैं वह एक भी कई तरह का होता है। ऐसा नहीं कि जिसे हम ने एक कह दिया वह एक और उसके मायनी भी एक। सही बात यह है कि एक भी कई तरह का होता है।

एक उसे भी कहते हैं जो दो से मिलकर एक बनता है। जैसे हम किसी के यहाँ सुबह में गए। हम से कहा गया कि आइए! अन्दर आइए! हम अन्दर जाकर बैठ गए। मेज़बान ने एक प्याली चाय पिलाई और हम चाय पीकर बाहर निकल आए। जैसे ही बाहर किसी से मिले तो उसने हम से कहा कि माशाअल्लाह! आज कल सुबह-सुबह आपके हालात अच्छे चल रहे हैं। हम ने कहा कि क्या अच्छे हालता चल रहे हैं। एक घंटा उनके यहाँ बैठे रहे मगर उन्होंने ख़ाली-ख़ूली एक चाय पिलाकर वापस कर दिया। जबकि जिसे हम एक चाय कह रहे हैं वह एक चाय नहीं है बल्कि कम से कम चार चीज़ें तो हैं ही। पानी, चाय की पत्ती, शकर और दूध। हो सकता है कि कहीं इसी चाय में इलायची और नमक भी मिला दिया जाए जिसके बाद यह पाँच-छः चीज़ें हो जाएंगी लेकिन इन सारी चीज़ों को हम एक ही कहते हैं। अगर इन्हीं चीज़ों को प्लेट में सजाकर दिया गया होता तो इन्हें छः ही कहा जाता। जब एक साथ मिला दिया तो छः नहीं कहा जाता बल्कि एक ही कहा जाता है। इसका मतलब यह है कि जो चार-छः से मिलकर बनता है उसे भी एक ही कहा जाता है।

इसके उलट किसी बाल्टी या बर्तन में पानी रखा हुआ है। एक ही तो है लेकिन इसी पानी को अगर दो बर्तनों में बाँट दिया जाए तो यह दो हो जाते हैं। इसी को गिलास में बाँट दिया जाए

---

[1] सूरए तौहीद/1

तो यह चार हो जाते हैं। इसी को प्यालियों में बाँट दिया जाए तो यही पानी छः, सात या आठ हो जाता है यानी एक था लेकिन कई में बंट गया। जो कई से मिलकर बना वह भी एक है और जो एक से कई हो गया वह भी एक है। अब हम जो कहते हैं कि अल्लाह एक है तो यह कौन सा 'एक' है? कहते तो सभी हैं मगर कितने मुसलमान जानते हैं कि अल्लाह के एक होने का मतलब क्या है? जब हम कहते हैं कि अल्लाह एक है तो क्या इसका मतलब यह होता है कि बहुत सारे ख़ुदा थे और हम ने उन सब को मिलाकर एक बना दिया है? नहीं! ऐसा बिल्कुल नहीं है। या इसका मतलब यह है कि जब तक हम चाहेंगे वह एक रहेगा और जब चाहेंगे टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा और बहुत से ख़ुदा बन जाएंगे? नहीं! यह भी नहीं हो सकता। अल्लाह एक है लेकिन न ऐसा एक है और न वैसा एक है।

तीसरी हालत यह है कि न यह है और न वह है यानी न कई से मिलकर बना है और न उसके टुकड़े हो सकते हैं मगर फिर भी यह तो हो ही सकता है कि उसमें कोई दूसरा घुस जए। जैसे हमारा हाथ एक है लेकिन जैसे ही कोई बीमारी हुई तो डाक्टर साहब इंजक्शन लगाने के लिए आए और उन्होंने इंजेक्शन लगा दिया। अगर हमारे गोश्त में इतनी जगह नहीं है कि सुई अन्दर जा सके तो यह इंजेक्शन लगा कैसे? हाथ हमारा एक है मगर इसमें इतनी लचक होती है कि सुई भी अन्दर जा सकती है बल्कि सुई के साथ-साथ दवा भी अन्दर जा सकती है। इसका मतलब यह है कि हमारा हाथ दिखने में चाहे कितना ही मज़बूत और ठोस हो मगर इस में इतनी जगह ज़रूर है कि सुई के साथ दवा भी अन्दर जा सकती है। भरे बाज़ू हैं और आदमी पहलवान दिखाई पड़ रहा है मगर फिर भी इंजेक्शन लग रहा है। इसका मतलब यह है कि जिसे हम ठोस समझ रहे हैं वह ठोस नहीं है क्योंकि उसमें इतनी जगह ज़रूर है कि सुई भी अन्दर चली जाए और दवा भी।

सूरए तौहीद की दूसरी आयत में हम पढ़ते हैः

اَللّٰهُ الصَّمَدُ

अल्लाह बेनियाज़[1] है।

हम 'एक' का मतलब तो समझ गए लेकिन यह *समद* क्या चीज़ है? जवाब दिया गया कि *समद* यानी ठोस। ख़ुदा कोई पत्थर तो है नहीं। ख़ुदा लोहा भी नहीं है। इसका जवाब यह दिया गया कि ख़ुदा लौहा नहीं है बल्कि यहाँ ठोस का मतलब यह है कि अगर ठोस न होता तो किसी दूसरे के आने की गुन्जाइश होती और जिसके अन्दर कोई दूसरा आ जाए उसे *समद* नहीं कहा जा सकता बल्कि *समद* उसे कहा जाता है जिसमें किसी को कोई रास्ता न मिल सके।

इसीलिए इस्लाम ने जिस तौहीद की बात की है उसमें अल्लाह ऐसा ख़ुदा है कि उसके अन्दर कोई नहीं समा सकता और न ही अल्लाह किसी के अन्दर समा सकता है। अब तो बात यहाँ तक पहुँच गई है कि लोग यह भी दावा करने लगे हैं कि कि अल्लाह उनके अन्दर समा जाता है। उनके अंदर शैतान समा जाता है और वह समझते हैं कि अल्लाह उनके अन्दर समा गया है। इस बेचारे आदमी के अन्दर तो इतनी भी समझ नहीं है कि अगर किसी के अन्दर अल्लाह समा जाएगा तो बड़ा कौन होगा? जैसे हम गिलास ख़रीदने बाज़ार गए। दुकान में गिलास रखे हुए हैं, छोटे भी और बड़े भी। दुकानदार ने बताया कि यह छोटा है और यह बड़ा। हम को दोनों बराबर दिख रहे थे। दुकानदार कहने लगा कि आपको दिखाई नहीं देता तो मैं क्या कर सकता हूं? हम ने कहा कि कैसे पता चलेगा कि एक छोटा है और दूसरा बड़ा? उसने एक गिलास उठाकर दूसरे गिलास के अन्दर रख दिया और उसके बाद पूछा कि अब तो समझ में आ गया ना? जो गिलास दूसरे में समा गया वह छोटा गिलास है और जिस गिलास में छोटा गिलास समा गया वह बड़ा है।

जो लोग यह मानते हैं कि किसी आदमी के अन्दर अल्लाह समा गया है उन के पास तो इतनी भी समझ नहीं है कि यह यह समझ जाएं कि फिर अल्लाहो अकबर क्यों कहते हैं? ऐसा है तो उसी को बड़ा समझा होता जिसके अन्दर अल्लाह समा गया है

---

[1] बेनियाज़ उसे कहते हैं जो किसी का मोहताज न हो।

जिसके बाद अल्लाह छोटा हो जाएगा और वह आदमी बड़ा हो जाएगा।

इसीलिए इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] ने तौहीद के बारे में समझाते हुए कहा थाः

अगर अल्लाह की तस्वीर तुम्हारे दिमाग़ में बन जाए तो फिर चाहे जितनी बारीकी से काम ले लो, अल्लाह की जो तस्वीर तुम्हारे दिमाग़ में बन गई वह तुम्हारे दिमाग़ की मख़लूक़ (रचना) होगी, अल्लाह नहीं हो सकता। जिसको दिमाग़ बनाए वह अल्लाह नहीं होता बल्कि अल्लाह तो वह है जो दिमाग़ को बनाता है।

इसीलिए सारी बातों को समेट कर *समद* कह दिया जाता है कि वह ऐसा अल्लाह है जो किसी चीज़ का मोहताज नहीं है, एक है, अकेला है और हर चीज़ से बेनियाज़ है।

फिर आख़िर में यह एलान भी कर दिया गयाः

لَم يَلِد وَ لَم يُولَد

उसका न कोई बेटा है और न बाप।

किसी चीज़ में समाने की बात तो अलग, वह तो ऐसा है कि उसके यहाँ तो कोई रिश्ता भी नहीं पाया जाता। न किसी से पैदा हुआ है और न उससे कोई पैदा होने वाला है। न किसी का बाप है और न किसी का बेटा है। बाप-बेटा तो वह था नहीं, इसलिए हो सकता था कि कोई दूसरा रिश्ता जोड़ लिया जाता। इसलिए क़ुरआन ने यह एलान भी कर दियाः

وَلَم يَكُن لَہ كُفُواً اَحَدٌ

उसका कोई कुफ़ो (साथी) भी नहीं है।

जो तौहीद इस्लाम ने दुनिया के सामने रखी है उस तौहीद के पाँच हिस्से हैंः

(1-2) अल्लाह का पहला कमाल यह है कि वह इतना एक है कि न मिलकर बना है और न उसके टुकड़े हो सकते हैं। न वह किसी में समाया है और न कोई उसके अन्दर समा सकता है। उसकी ज़ात ऐसी है कि वह *वाहिद* नहीं बल्कि *अ-अ-द* है और अगर उसे सारी दुनिया से मिलाकर देखा जाए तो वह किसी का

मोहताज नहीं है बल्कि सारी दुनिया ही उसकी मोहताज है। इस बात को यूँ भी कह सकते हैं कि सब उसके मोहताज हैं मगर वह किसी का मोहताज नहीं है। वह उसकी *अ-ह-दियत*[1] है और यह इसकी *स-म-दियत*[2] है।

(3) तीसरा कमाल यह है कि वह किसी का बेटा भी नहीं है।

(4) चौथा कमाल यह है कि वह किसी का बाप भी नहीं है यानी उसके अन्दर कोई माद्दी (दुनियावी) रिश्ता नहीं पाया जाता।

(5) वह किसी का कुफ़ो (साथी) भी नहीं है यानी न ऊँचे रिश्ते वालों का, न नीचे रिश्ते वालों का और न बराबर वालों का। वह किसी का साथी या रिश्तेदार नहीं है।

अगर यह पाँचों बातें हमारी समझ में आ जाएं तो इसका मतलब यह होगा कि हम ने तौहीद को समझ लिया है और अगर यह बातें हमारी समझ में नहीं आईं तो फिर हम ने तौहीद का कलमा तो पढ़ा है लेकिन हम तौहीद को समझे नहीं हैं।

हमें उसकी वहदानियत यानी उसके एक होने को भी पहचानना है, उसकी बेनियाज़ी को भी समझना है यानी यह भी समझना है कि वह किसी का मोहताज नहीं है। साथ ही यह भी समझना है कि वह किसी का बाप या किसी का बेटा भी नहीं है और न ही कोई उसका साथी है। इन पाँचों बातों को समझने के बाद ही हम तौहीद को समझ पाएंगे।

अब तक जो कुछ ऊपर कहा गया है उससे दो नतीजे निकलते हैं:

पहला यह कि अगर अल्लाह ने *अ-ह-द* के साथ *स-म-द* न कहा होता तो अल्लाह पर ईमान लाना बड़ा कठिन हो जाता। यानी अगर अल्लाह ने अपने एक होने के साथ-साथ यह न कहा होता कि वह किसी का भी मोहताज नहीं है तो कलमा पढ़ना, मुसलमान होना और अल्लाह पर ईमान लाना बड़ा कठिन था। ऐसे अल्लाह पर ईमान लाना कितना कठिन काम है, इस बात को वह लोग नहीं समझ सकते जो मुसलमान घरानों में पैदा हुए हैं

---

[1] अल्लाह का एक होना

[2] अल्लाह का हर चीज़ से बेनियाज़ होना यानी वह किसी भी चीज़ का मोहताज नहीं है।

क्योंकि उन्हें पता ही नहीं होता कि तौहीद का अक़ीदा कैसा बनता है? वह जानते ही नहीं हैं कि अल्लाह को कैसे माना जाता है क्योंकि जिस दिन आँख खुली उस दिन उन लोगों को देखा जो अल्लाह को मानने वाले थे और जिस दिन ज़बान खुली उस दिन कहा कि अल्लाह एक।

मगर मक्के के उन लोगों के दिल से पूछिए जो साढ़े तीन सौ ख़ुदाओं को मानने वाले थे और जिनके बीच में खड़े होकर अल्लाह के रसूल[स०] ने फ़रमाया थाः

قُولُوا لَااِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ

सब कहो कि अल्लाह के सिवा कोई ख़ुदा नहीं है।

जिसने भी अल्लाह के रसूल[स०] की यह बात सुनी वह सोचने लगा कि मिला क्या और हाथ से गया क्या?

जिसके सामने भी अल्लाह के रसूल[स०] ने इस्लाम पेश किया उससे यही कहा कि कहो अल्लाह के सिवा कोई ख़ुदा नहीं है। बस एक अल्लाह है, बाक़ी कोई अल्लाह नहीं है। पूछने वाले ने पूछा कि जिसके पास पत्थरों के ख़ुदा हैं क्या वह भी ख़ुदा नहीं हैं? अल्लाह के रसूल[स०] ने कहा कि हाँ! वह भी नहीं। जिनके पास पेड़ों के ख़ुदा हैं? कहा कि वह भी नहीं। सितारे? कहा कि यह भी नहीं। चाँद-सूरज? यह भी नहीं। तीन सौ साठ-पैंसठ जितने भी थे उनमें से कोई भी ख़ुदा नहीं बचा। फिर बचा क्या? अल्लाह के रसूल[स०] ने कहा कि एक ख़ुदा बचा है। हर आदमी हिसाब लगा रहा था कि इनके दीन को मानने का मतलब यह है कि साढ़े तीन सौ ख़ुदा गए। अगर वह बेचारे इतना ही जानते होते कि अल्लाह कितना बड़ा है तो उन पत्थरों के सामने सजदा ही क्यों करते? वह जानते ही नहीं थे कि अल्लाह किस हस्ती का नाम है। वह तो यह समझ रहे थे कि कुछ ख़ुदा पहले से उनके पास हैं और एक ख़ुदा अल्लाह के रसूल[स०] लेकर आए हैं। फ़र्क़ बस इतना है कि अल्लाह के रसूल[स०] जो यह नया ख़ुदा लेकर आए हैं वह एक है। हमारे पास पहले से ही साढ़े तीन सौ हैं। वह लोग कह रहे थे कि एक के लिए अपने साढ़े तीन सौ ख़ुदाओं को छोड़ दें, यह भला कैसे हो सकता है। यह कितना

कठिन काम था? एक अल्लाह के लिए इतने सारे ख़ुदाओं को छोड़ देना बड़ा कठिन काम था यानी उन लोगों को अपने ख़ुदाओं का एक बड़ा हिस्सा छोड़ना पड़ रहा था। छोटे हिस्से के लिए बड़े हिस्से को छोड़ना पड़ जाए तो हर आदमी यही कहता है कि कौन झगड़ा मोल ले? तभी तो जहाँ छोटे-बड़े हिस्से का मामला आ जाता है वहाँ छोटे के लिए बड़े हिस्से को कोई नहीं छोड़ता। यहाँ तो छोटे हिस्से की कोई बात ही नहीं है क्योंकि उधर साढ़े तीन सौ खुदा और इधर बस एक। अगर अल्लाह के रसूल[स०] ने कहा होता कि एक सौ साठ तो फिर भी कम या ज़्यादा का मामला होता, वह कहते साढ़े तीन सौ और अल्लाह के रसूल[स०] कहते पचास तो भी कम-ज़्यादा का मामला बन जाता मगर उधर साढ़े तीन सौ और इधर बस एक।

मक्के में हर आदमी सोच रहा था कि इतने सारे ख़ुदा गए और मिला तो बस एक अल्लाह। इस एक अल्लाह के लिए इतने सारे ख़ुदाओं को कौन छोड़े? उधर साढ़े तीन सौ और इधर बस एक लेकिन फ़र्क़ यह है कि वह सारे के सारे ख़ुदा मोहताज हैं। यह एक है मगर यह किसी का मोहताज नहीं है। यह है तौहीद जो हमें यह सिखाती है कि जब मोहताजों और बेनियाज़ में टकराव हो जाए तो मोहताज चाहे जितने भी हों सब को छोड़ दो और बेनियाज़ अगर एक भी मिल जाए तो उसे ले लो।

अब सवाल यह है कि अल्लाह किस चीज़ से बेनियाज़ है? और वह सारे ख़ुदा किसके मोहताज हैं?

वह सारे ख़ुदा सब से पहले तो अपने बनने में ही दूसरों के मोहताज हैं, बाक़ी चीज़ें तो बाद की हैं यानी हम इन्हें ख़ुदा बना देंगे तो यह ख़ुदा बन जाएंगे वरना पत्थर के पत्थर ही रहेंगे मगर जो इस्लाम का अल्लाह है वह किसी का मोहताज नहीं है, न बनने में और न बनाने में। अगर उन सारे ख़ुदाओं को अल्लाह बनाकर अपने घर में रख लिया तो कोई उन्हें अल्लाह मानेगा भी नहीं क्योंकि उन्हें अल्लाह मनवाने के लिए किसी बड़ी जगह पर रखना पड़ेगा, इसलिए वह सारे ख़ुदा किसी बड़ी जगह के भी मोहताज हैं। उन सारे ख़ुदाओं को भी बस तभी ख़ुदा माना गया था जब उन्हें वहीं लाकर रखा गया जो अल्लाह का

घर है। इसका मतलब यह हुआ कि वह सारे ख़ुदा बनने के मोहताज और अल्लाह के घर में लाकर रखे जाने के भी मोहताज हैं। बनने और अल्लाह के घर में लाकर रखे जाने के बाद भी यह तब तक ख़ुदा नहीं हो सकते जब तक कि उन्हें माना न जाए यानी माने जाने के भी मोहताज हैं। अब अगर बन्दे हाथ जोड़कर खड़े हो जाएं तो यह ख़ुदा हो जाएं वरना पत्थर ही तो था वहाँ पड़ा हुआ था यहाँ लाकर रख दिया गया।

सारी बातों का निचोड़ यह है कि वह सारे ग़लत ख़ुदा साढ़े तीन सौ और यह एक ख़ुदा मगर वह सब बनने में मोहताज हैं मगर यह नहीं है। वह सब कहीं बड़ी जगह पर रखे जाने के मोहताज हैं मगर यह नहीं है। वह सब माने जाने के मोहताज हैं मगर यह किसी के भी मानने या न मानने का मोहताज नहीं है।

जब ऐसा टकराव हो जाए तो ज़्यादा को छोड़कर एक पर ईमान ले आना चाहिए।

यह बात हमें बस वही तौहीद समझाती है जो इस्लाम ने दुनिया के सामने रखी है।

अल्लाह किसी भी चीज़ का मोहताज नहीं है और सारी दुनिया उसकी मोहताज है। अल्लाह और बन्दे में यही फ़र्क़ है कि अल्लाह हर चीज़ से बेनियाज़ है मगर बन्दा अल्लाह से बेनियाज़ नहीं हो सकता मगर यह भी है कि अगर बन्दा अपने अल्लाह से जुड़ जाए तो वह उसे सारी दुनिया से बेनियाज़ बना देता है। सब के सब उसके मोहताज होंगे मगर वह किसी का मोहताज नहीं होगा।

यह है तौहीद। अगर लोग तौहीद को समझ लेते तो सारे मामले हल हो जाते। अगर मामले उलझे हुए हैं तो इसीलिए क्योंकि अभी मुसलमान ठीक से तौहीद को समझ ही नहीं पाए हैं।

अल्लाह के रसूल[स०] की बड़ी मशहूर हदीस है जिसे सारे मुसलमान मानते हैं:

> अगर एक बार सूरए तौहीद पढ़ा जाए तो एक तिहाई क़ुरआन के बराबर है। अगर दो बार पढ़ा जाए तो दो

तिहाई क़ुरआन के बराबर और अगर तीन बार पढ़ा जाए तो पूरे क़ुरआन के बराबर है।

अगर सारे क़ुरआन का सवाब लेना है तो सूरए तौहीद को तीन बार पढ़ना होगा। अगली बात यह है कि पूरा क़ुरआन वही है जिसमें पूरा इस्लाम है। सारा इस्लाम किसी घर में नहीं रखा हुआ है बल्कि इसी क़ुरआन में है यानी अगर इस्लाम को समझना है तो सूरए तौहीद को तीन बार दोहराना होगा। सूरए तौहीद में हमें यही तो समझाया गया है कि अल्लाह मोहताज नहीं है बल्कि वह हर चीज़ से बेनियाज़ है। जब मोहताज और बेनियाज़ में टकराव हो जाए तो मोहताज को छोड़कर बेनियाज़ का हाथ थामना है। यह बात अगर हम एक बार समझे तो एक तिहाई इस्लाम समझे, अगर दो बार समझे तो दो तिहाई इस्लाम समझे और अगर तीन बार समझे तो सारा इस्लाम समझ लिया।

इस्लाम ने हमें यही सिखाया है कि हमारा मालिक और हमें पैदा करने वाला अ-ह-द (एक) और स-म-द (बेनियाज़) है। न उसका कोई बाप है और न उसका कोई बेटा और न ही उसका कोई कुफ़ो (साथी) है।

(3)

अल्लाह की ज़ात व सिफ़ात

तौहीद के बारे में पहला सवाल यह है कि अल्लाह *एक* है तो वह कैसा एक है और उसके एक होने का मतलब क्या है? इस सवाल के जवाब के लिए तीन बातों पर ध्यान देना ज़रूरी है।

इस दुनिया में कोई भी चीज़ ऐसी नहीं है जिसे *एक* कहा जा सके। ख़ुद इन्सान के बारे में क़ुरआन में अल्लाह ने फ़रमाया हैः

> हम ने इन्सान को दो मिले-जुले माद्दों (Matter) से बनाया है।[1]

जो दो से मिलाकर बनाया गया हो वह भला एक कैसे होगा? उसमें इकाई कहाँ से आ पाएगी? उसे बनाने वाले ने बनाया ही दो से है। इसलिए हमारी पहली कमज़ोरी तो यह है कि अगर हम एक कहे भी जाएं तब भी हम एक नहीं हैं। फिर जिस चीज़ से आदमी को बनाया गया है उसे भी किसी ने बनाया है और

---

[1] सूरए दहर/2

ऐसा बस आदमी के साथ नहीं है बल्कि दुनिया की हर चीज़ ऐसी ही है और उसमें कहीं से कहीं तक इकाई नहीं पाई जाती। क़ुरआन ने भी बार-बार इसी बात पर ज़ोर दिया है कि हम ने हर चीज़ को जोड़ा-जोड़ा बनाया है। हम ने किसी को अकेला नहीं बनाया है। बाहर की दुनिया में देखें तो वहाँ भी एक का जोड़ा दूसरे को बनाया है और अगर अन्दर की दुनिया में देखें तो अन्दर भी हर चीज़ कई चीज़ों से मिलकर बनी हुई है। जब कई चीज़ों से मिलकर कोई चीज़ बनती है तो हम कभी उस को पत्थर कह देते हैं, कभी पेड़, कभी जानवर और कभी इन्सान या जिन्नात और फ़रिश्ते। यह सब वह हैं जिनमें दुई पाई जाती है, इनमें से किसी एक के अन्दर भी इकाई नहीं है। अगर हम और गहराई में जाएं तो हमें अन्दाज़ा होगा कि हर वह चीज़ जो हमें एक दिखती है और हम कहते हैं कि उसे किसी से भी मिलाकर नहीं बनाया गया है, वह चीज़ भी जैसे ही बनती है वैसे ही वह भी मुरक्कब (मिश्रित) हो जाती है। इन्सान को इन्सान इसीलिए कहा जाता है क्योंकि वह मौजूद है यानी है। अगर वह सिरे से होता ही नहीं तो भला कौन उसे इन्सान कहता? इसका मतलब यह है कि हमारे अन्दर कम से कम दो चीज़ें तो अपने आप आ गईः एक हमारी इन्सानियत और दूसरा हमारा होना। इन दोनों के एक साथ मिल जाने की वजह से ही हम इस दुनिया में आ पाए हैं वरना अगर हमारी इन्सानियत के साथ 'हमारा होना' न होता तो हमारा दूर-दूर तक कहीं पता भी न होता। इसलिए हम इन्सान भी कम से कम दो चीज़ों से मिलकर बने हैं। न हम अकेले इन्सान हैं बिना अपने होने के और न ही अकेले "हैं" बिना इन्सानियत के। अगर हमारी इन्सानियत कोई अकेली चीज़ थी तो भी जैसे ही हम इस दुनिया में आए तो हमारी इन्सानियत के साथ हमारा होना भी जुड़ गया और हम बन गए।

आगे बढ़कर हमारी सिफ़ात (गुण) की बारी आती है। यहाँ भी हम इकाई से बाहर निकल जाते हैं। जब हम इस दुनिया में आए थे तो हमारे अन्दर कोई कमाल या सिफ़त नहीं थी। कमज़ोर इतने थे कि न अपने आप से उठ सकते थे और न बैठ सकते थे। नासमझ ऐसे थे कि कुछ जानते ही नहीं थे। क़ुरआन

ने ख़ुद कहा है कि जब तुम अपनी माँ के पेट से निकल कर इस दुनिया में आते हो तो तुम कुछ भी नहीं जानते। जब हम इस दुनिया में आते हैं तो कोई हमें न अच्छा कह सकता है और न बुरा, न बहादुर कह सकता है और न डरपोक, न आलिम कह सकता है और न जाहिल। हम तो अपने साथ कुछ भी लेकर नहीं आते। अल्लाह ने हमें बना दिया तो हम बन गए। इससे हटकर हम कुछ भी नहीं होते। हमारे पास कोई सिफ़त नहीं होती। हम इस दुनिया में बिल्कुल ख़ाली हाथ आते हैं।

आदमी जब पैदा होता है तो बिल्कुल कमज़ोर मगर धीरे-धीरे उसके अन्दर ताक़त आती जाती है। फिर कुछ दिन के बाद माँ अपनी गोद में लेकर प्यार से कहती है कि बेटा कहो कि अल्लाह एक है तो जिहालत के बजाए इल्म आ जाता है। माँ ने जेब में चार पैसे रख दिए, ग़रीबी गई पैसा आ गया। कहा कि बेटा! जेब में मत रख लेना बल्कि अगर फ़क़ीर आ जाए तो उसे दे देना। बच्चे ने उठाकर दे दिया। अब उस बच्चे के अन्दर करम भी आ गया। आगे चलकर माँ ने कहा कि किसी भी मामले में ज़िल्लत (नीचता) बर्दाश्त न करना बल्कि हमला करने वाले का जवाब देना जिससे उस बच्चे के साथ बहादुरी भी लग गई। अब यह बच्चा पूरी दुनिया का सफ़र यूँ ही तय करता रहेगा। ख़ाली हाथा आया था मगर अब ख़ाली नहीं रहेगा। उसके साथ कमाल ऐसा ही आता जाएगा। वैसे हमारी ज़िन्दगी में ऐसा भी होता है कि जो साथ आना जानता है वह साथ छोड़ना भी जानता है। ताक़त आ गई लेकिन जैसे ही बीमार पड़े फिर पहले जैसे हो गए। अब कोई उठाए तो उठें और कोई बिठाए तो बैठें क्योंकि ताक़त अपनी तो थी नहीं। खा-पीकर आई थी जो बीमारी के साथ चली गई। शरीफ़ों के साथ थे तो उन्होंने करम करना सिखा दिया जिससे हम भी करीम हो गए। कंजूसों के साथ हो लिए तो सारा करम फिर से वापस चला गया और हम भी कंजूस हो गए। पढ़े-लिखों के साथ रहे तो हमारे पास भी इल्म आ गया और फिर कुछ दिन के बाद पढ़े-लिखे लोगों से दूर हुए तो फिर वही जिहालत आ गई। इसका मतलब यह है कि जो चीज़ें आती हैं वह टिकाऊ नहीं हैं। जो चीज़ आना जानती है वह जाना भी

जानती है। यहाँ तक कि यह जो ज़िन्दगी हमारे साथ लगी हुई है यह भी हमारी अपनी होती तो हम सन् 1950 में क्यों पैदा होते? उस से पहले पैदा हो गए होते मगर सन् 1950 में अल्लाह ने पैदा कर दिया तो उस सन् में ज़िन्दगी मिल गई। पहले पैदा कर दिया होता तो पहले ज़िन्दगी मिल जाती। अब ज़िन्दगी मिल गई है तो हम ज़िन्दा कहे जाते हैं और पचास साल के बाद साँस आना बन्द हो जाएगी तो फिर पलट कर वैसे ही मुर्दा हो जाएंगे। एक तो हम शुरू में ही मिलकर बने थे। कई चीज़ों से मिलाकर बनाए गए थे और अगर वह कई चीज़ें न होतीं तब भी दो चीज़ें तो बहरहाल थीं: एक हमारी इन्सानियत और दूसरा हमारा होना (वुजूद)।

जब हम बन गए तो हमारे साथ दूसरी सिफ़तें (गुण) भी जुड़ती गई मगर हम अलग हैं और हमारी सिफ़तें अलग। यह हमारे गुण जिन्हें हम कमाल भी कहते हैं यह हमारा कमाल तो हमारे साथ बाद में आया है। किसी के पास दो कमाल, किसी के पास दस कमाल, किसी के पास सौ और किसी के पास हज़ार मगर जितने भी कमाल हैं वह सब के सब बाद में आए हैं।

अब यहाँ पर यह बात भी ध्यान देने की है कि जिसके पास हज़ार कमाल हैं वह उससे बड़ा कहा जाता है जिसके पास सौ कमाल हैं लेकिन अगर हम ज़रा गहराई में जाकर देखें तो रिज़ल्ट यह निकलेगा कि जिसके पास कमाल कम हैं उसकी गर्दन पर एहसान का बोझ भी कम है क्योंकि कमाल तो हमारा था ही नहीं बल्कि किसी दूसरे ने हमें दिया था। यही वह जगह है जहाँ शराफ़त का इम्तेहान होता है। जो दूसरों की भीख लेकर उसे अपना समझ लेते हैं वह घमंडी बन जाते हैं और अकड़ जाते हैं जिसके बाद कभी अपनी ख़ुदाई का एलान कर देते हैं तो कभी रिसालत का लेकिन जो अपनी सच्चाई को जानते हैं और यह भी जानते हैं कि उनके पास अपना कुछ भी नहीं है, वह घमंड करें तो किस बात पर और अकड़ें तो किस चीज़ पर? इसीलिए जितना आदमी के अन्दर अपने कमाल का एहसास बढ़ता जाता है उतना ही उसके सजदे भी बढ़ते जाते हैं।

हम ग़रीबों और फ़क़ीरों के पास जो कुछ भी है जैसे दो रोटियाँ, दो कपड़े, थोड़ा सा इल्म या और भी जो कुछ है उसके लिए शुक्र के चौंतीस सजदे ही बहुत हैं मगर जिसके पास ज़मीन से लेकर आसमान तक की ताक़तें हों या जिसके पास दुनिया से लेकर जन्नत तक की हुकूमत हो वह भला चौंतीस सजदे करके कैसे सो पाएगा ? ऐसा इन्सान हमारी तरह एहसान को भूल जाने वाला नहीं हो सकता। ऐसा इन्सान तो रात-रात भर नमाज़ की हालत में खड़ा रहेगा और हज़ार तकबीरों की आवाज़ें भी सुनाई देंगीं।

कुछ नासमझ लोग कहते भी हैं कि हम लोग नमाज़ें पढ़ते हैं तो बात समझ में आती है लेकिन अल्लाह के रसूल[स०] को कौन सी जन्नत ख़रीदना थी ? हम सजदे करते हैं तो ठीक है क्योंकि हमारी जन्नत ख़तरे में पड़ी हुई है लेकिन जो जन्नत और जहन्नम को बांटने वाले हैं वह हज़ार-हज़ार रकअत नमाज़ें क्यों पढ़ते थे ? यह लोग जिस तरह अपनी नमाज़ों को बाज़ार का सौदा समझते हैं उसी तरह अल्लाह के रसूल[स०] की बन्दगी और उनकी नमाज़ों को भी समझते हैं कि सजदे कर लिए और जन्नत मिल गई।

बात यह नहीं है कि कुछ नमाज़ें देकर अल्लाह से कुछ लेना है बल्कि अल्लाह ने जन्नत का कंट्रोल उन्हें दे दिया है इसलिए उन्हें अल्लाह का शुक्र करना है। हमारा मामला अलग है और उनका मामला अलग। उनका मामला यह है कि अल्लाह ने इतना दिया है कि रात भर खड़े रहने के बाद भी सोचते हैं कि अल्लाह के एहसानों का हक़ अदा हुआ कि नहीं ? इसीलिए जब अल्लाह के रसूल[स०] से पूछा गया कि आप इतनी नमाज़ें क्यों पढ़ते हैं और इतने रोज़े क्यों रखते हैं तो आपने यही कहा था कि बात जन्नत की नहीं है बल्कि बात यह है कि क्या मैं अल्लाह का शुक्र करने वाला बन्दा भी न बनूँ ? मैं अल्लाह से कोई सौदा नहीं कर रहा हूँ बल्कि मैं तो अल्लाह का शुक्र अदा कर रहा हूँ।

इसीलिए इमाम अली[अ०] ने भी फ़रमाया था कि न मैं जन्नत की लालच में तेरे सामने अपना सर झुकाता हूँ और न जहन्नम

के डर से बल्कि मैं तो इसलिए तेरे सामने अपना सर झुकाता हूँ क्योंकि मैं तुझे इस लायक़ समझता हूँ।

बहरहाल जब हम इस दुनिया में आए थे तब भी हम अकेले नहीं थे क्योंकि तब भी हमारे अन्दर दुई थी, इकाई नहीं थी। फिर जब कमाल की बारी आई तो यहाँ भी हम अकेले नहीं थे। जब कमाल आए तो यहाँ भी हम दो हो गए यानी हम और हमारा इल्म, हम और हमारी ताक़त, हम और हमारी साँसें, हम और हमारा करम, हम और हमारी बहादुरी और इसी तरह की दूसरी सारी चीज़ें।

इसके बाद काम करने की बारी आती है। यहाँ भी हम अकेले कुछ नहीं कर सकते। दो रकअत नमाज़ भी पढ़ना चाहें और चाहें कि नमाज़ पढ़ने के लिए अपने कपड़े भी हम ख़ुद ही बनाएं तो कपड़ा तो बन जाएगा मगर वह नमाज़ के काम बिल्कुल नहीं आ पाएगा बल्कि शायद कफ़न पहनाने के काम आ जाए। सवाल यह है कि कपड़ा तैयार ही कैसे होगा क्योंकि कपड़ा तैयार करने के लिए जो ज़रूरी चीज़ें चाहिएं उनकी खेती करना होगी। खेती के बाद जब वह चीज़ें पैदा हो जाएंगी तो बनेंगी कैसे? कारख़ाना कहाँ से आएगा? मशीनें कहाँ से आएंगी? इसका मतलब यह है कि अगर हम कोई छोटा सा काम भी अकेले करना चाहें तो नहीं कर सकते। न जाने कितने साथ देने वाले होते हैं तो एक काम पूरा हो पाता है। यहाँ तक कि अगर हमें रोटी के दो टुकड़े खाना हों तो भी अपने दम पर नहीं खा सकते। अगर पकाने वाले ने रोटी न पकाई होती तो हम क्या खाते? अगर किसी ने गेहूँ से आटा न बनाया होता तो रोटी कैसे बनती? अगर किसी ने गेहँ की खेती न की होती तो गेहूँ कहाँ से आता? अगर खेती में काम आने वाली चीज़ें न होतीं तो खेती कैसे होती? रोटी के दो टुकड़े खाने के लिए भी हम इतने सारे लोगों के मोहताज हैं।

अब तक की बातों का निचोड़ यह है कि अपनी ज़िन्दगी में हम तीन जगहों से गुज़रते हैं और तीनों जगहों पर दूसरों के मोहताज हैं: न हम अपनी ज़ात में अकेले हैं, न अपनी सिफ़ात व कमाल में और न अपने कामों में।

अब इसी सिस्टम को उलट देते हैं। अल्लाह ऐसा एक अकेला है जो अपनी ज़ात में भी अकेला है, अपनी सिफ़ात में भी अकेला है और अपने आमाल व अफ़आल (कामों) में भी अकेला है। यानी न उसकी ज़ात किसी चीज़ से मिलकर बनी है, न उसकी सिफ़ात बाद में उसके साथ आकर उससे जुड़ी और न ही वह अपने कामों में किसी का मोहताज है। वह काम लेना जानता है मगर काम में किसी का मोहताज नहीं है।

इसी लिए हज़रत अली[अ०] ने कहा था कि अगर तौहीद को समझना चाहते हो तो अल्लाह से उसकी सिफ़ात को भी अलग करो। इमाम कहना यह चाह रहे हैं कि अल्लाह की ज़ात से उसकी सिफ़ात (गुणों) को अलग करने के मायनी यह हैं कि अल्लाह वैसा नहीं है जैसे तुम हो यानी जब हम दुनिया में आए थे तो इल्म हमारे साथ नहीं था बल्कि बाद में हमारे साथ आकर लगा। इसलिए हम कुछ और हमारा इल्म कुछ और। हम अलग और हमारी ताक़त अलग। हम अलग और हमारा कमाल अलग।

इसके उलट जब हम अल्लाह को देखते हैं तो उसके यहाँ ऐसा नहीं है बल्कि अल्लाह उस हस्ती का नाम है जिसकी पूरी हस्ती ही इल्म है, कमाल है, ताक़त व क़ुदरत है, ज़िन्दगी है...। उसके साथ ज़िन्दगी या इल्म बाद में आकर नहीं मिला है क्योंकि अगर बाद में मिला होता तो फिर कोई मिलाने वाला भी होता। जैसे हम से इल्म आकर मिला तो टीचर ने मिलाया। हम से दौलत आकर मिली तो हमारी पूँजी ने मिलाई। अगर कल्चर आकर मिला तो माँ-बाप या बुज़ुर्गों ने मिलाया। अगर अल्लाह के साथ भी कोई कमाल आकर मिला होता तो कोई न कोई मिलाने वाला ज़रूर होता और जो मिलाने वाला होता फिर वही अल्लाह होता। यह हमारा वाला अल्लाह, अल्लाह नहीं होता क्योंकि अल्लाह मोहताज नहीं हो सकता। वह तो हर चीज़ से बेनियाज़ होता है। अल्लाह के कमाल का मतलब ही यह है कि वह 'ऐने इल्म' है, 'ऐने क़ुदरत व ताक़त' है और 'ऐने हयात' है।

इसी बात को दूसरी तरह से यूँ भी कह सकते हैं कि अल्लाह का कमाल ''ऐने ज़ात'' है। अब सवाल यह है कि ''ऐने ज़ात सिफ़ात'' क्या चीज़ है?

असलियत यह है कि ''ऐने ज़ात कमाल व सिफ़ात'' को समझना बड़ा कठिन काम है क्योंकि इसे समझना हमारी अक़्ल से परे है जिसकी वजह यह है कि अभी तो हम उन्हीं लोगों के कमाल को नहीं समझ पाए हैं जिन्हें हम ने ख़ुद अपनी आँखों से देखा है। इस बात को इस तरह से समझते हैं कि जब हम इस दुनिया में आए तो हमें सौ लोग देखने वाले थे। जैसे जब हम 1970 में पैदा हुए तो हमें देखने वाले एक लाख थे। अगर एक लाख न सही तो ख़ानदान के सौ-पचास तो थे ही जिनको यह पता था कि हम पैदा हुए हैं। 1970 से पहले हम थे ही नहीं क्योंकि ज़िन्दगी तो अब मिली है। ज़िन्दगी मिली तो देखने वाले भी मौजूद थे। इसलिए देखने वाले समझ गए कि ज़िन्दगी कैसे मिलती है। जिसने बचपन से हमें माँ की गोद में देखने के बाद सड़क पर चलता-फिरता देखा तो उसने समझ लिया कि ताक़त कैसे मिलती है। जिसने हमारे बचपन की जिहालत देखी और फिर बाद में पढ़ते-लिखते देखा तो वह समझ गया कि इल्म कैसे आता है लेकिन कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनसे कमाल को मिलाया तो गया है और उनका कमाल भी ''ऐने ज़ात'' नहीं है यानी उनका कमाल भी किसी का दिया हुआ है मगर दिक़्क़त यह है कि देने वाले ने उन्हें यह कमाल उस वक़्त दिया था जब कोई देखने वाला था ही नहीं। किसी ने उन्हें इल्म भी दिया है और किसी ने उन्हें ताक़त भी दी है मगर देखने वाला कोई भी नहीं था। कोई देखने वाला होता तो देख भी पाता कि देने वाले ने क्या दिया है और लेने वाले ने क्या लिया है। यह सारा लेना-देना तब हुआ जब हमारा कहीं अता-पता ही नहीं था। न उनकी ज़िन्दगी के बारे में पता है कि कब मिली और न ही उनके कमाल के बारे में कुछ ख़बर है। जब हम अल्लाह के इन बन्दों को नहीं समझ सकते तो उसे कैसे पहचान पाएंगे जो देने वाला है जिसका नाम अल्लाह है? यही वजह है कि जब अल्लाह के यह बन्दे अल्लाह के सामने खड़े होते हैं तो फ़ौरन कह बैठते हैं कि ऐ अल्लाह! हम तुझे नहीं समझ सकते। जब आदमी अल्लाह के इन बन्दों की ज़िन्दगी को नहीं समझ सकता कि कैसी है तो बनाने वाले को कैसे पहचानेगा? आदमी पहले इनका इल्म

समझे कि कितना है, पहले इनकी ताक़त को समझे कि कितनी है तब जाकर उसकी समझ में आएगा कि जिसने इनकी उंगलियों में इतनी ताक़त रखी है ख़ुद उसकी ताक़त कितनी होगी। अगर हम उन्हीं लोगों को पहचान लें जिन्हें कमाल दिया गया है तो यही बहुत बड़ी बात है।

इस बात को इस मिसाल से समझते हैं। एक बच्चा पहली किताब पढ़ रहा है। हम ने उससे पूछा कि बेटा! आपका टीचर कौन है? बच्चे ने नाम बता दिया। उसके जवाब से पता चल गया कि उस टीचर के पास इतना इल्म तो है ही कि उसने पहली किताब पढ़ा ली। दूसरे बच्चे के हाथ में हम ने दूसरी किताब देखी। उससे भी पूछा कि आपका टीचर कौन है? उसने भी नाम बता दिया जिससे हम फ़ौरन समझ गए कि उस टीचर के पास भी इतना इल्म तो है ही कि उसने दूसरी किताब पढ़ा ली। एक बच्चे के पास पाँचवीं किताब देखी तो उससे भी पूछा कि आपका टीचर कौन है और उसने भी अपने टीचर का नाम बता दिया जिससे हम यह भी समझ गए कि यह टीचर पाँचवीं किताब पढ़ा सकता है। सारी बात का निचोड़ यह हुआ कि जो स्कूल में पढ़ाने वाला है उसके पास इतना इल्म है कि उसने स्कूल में पढ़ा लिया, जो कॉलेज में पढ़ाने वाला है उसके पास इतना इल्म है कि उसने कॉलेज में पढ़ा लिया और इसी तरह जो युनिवर्सिटी में पढ़ाने वाला है उसके पास इतना इल्म है कि उसने युनिवर्सिटी में पढ़ा लिया। अब जो लोग अलग से टीचर को नहीं पहचानते वह पढ़ने वाले को देखकर समझ जाते हैं कि टीचर को इतना तो आता ही है कि उसने पढ़ा लिया। जितना पढ़ने वाला ऊँचा होगा उतना ही पढ़ाने वाला भी ऊँचा होगा और हम पढ़ने वाले को देखकर समझ जाएंगे कि पढ़ाने वाला भी कोई ऊँचा ही है।

अब अगर अल्लाह के इल्म के कमाल को पहचानना है तो उसका कमाल स्कूल-कॉलेज में पढ़ने वालों को देखकर समझ में नहीं आएगा बल्कि उसका कमाल हमें उसके ऐसे बन्दे समझाएंगे जो यह कहते हों कि जो चाहे पूछ लो। जब ऐसा बन्दा हमारे सामने आएगा तब हमारी समझ में आएगा कि जिसे इतना आता

है कि हमारे हर सवाल का जवाब दे सकता है तो उसके पास कितना इल्म होगा जिसने इस बन्दे को सिखाया है। जब ताक़त लेने वाला अपनी उंगली के इशारे से सूरज को पलटा देगा तो समझ में आएगा कि इतनी ताक़त देने वाले के पास कितनी ताक़त होगी। इसलिए अल्लाह के कमाल को समझने के लिए उन बन्दों के कमाल को समझना होगा जिन्हें अल्लाह ने कमाल देकर भेजा है।

जिसका सर चार पैसों के आगे झुक जाता हो उसके सजदों से अल्लाह को नहीं समझा जा सकता। जो ख़ुद को दुनिया की दौलत के लिए बेच दे उसे देखकर अल्लाह की तौहीद नहीं समझी जा सकती। जब अल्लाह के वह बन्दे अपना सर सजदे में रखते हैं जिनका सर दुनिया की कोई ताक़त नहीं झुका सकती तब समझ में आता है कि अल्लाह कितनी बड़ी हस्ती का नाम है।

इसलिए अगर अल्लाह को समझना है तो हमें अल्लाह के उन बन्दों को सामने रखना होगा जिन्हें अल्लाह ने इतने कमाल वाला बनाया है कि उनकी पूरी ज़िन्दगी, उनके बोलने-चालने, उनके उठने-बैठने यानी उनकी हर बात से अल्लाह की अज़मत और उसकी तौहीद को पहचाना जा सकता है। जब यह लोग अल्लाह के सामने अपना सर झुकाते हैं तब समझ में आता है कि सजदा बस अल्लाह के लिए ही किया जा सकता है क्योंकि वही बनाने वाला है और वही सारी दुनिया का मालिक है।

(4)

तौहीद की दलीलें

कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें समझने के लिए दलीलों व सुबूतों की ज़रूरत होती है। अगर कोई सुबूत नहीं है तो उस बात को कोई नहीं मानता लेकिन कुछ बातें ऐसी भी होती हैं कि अगर उन्हें समझ लिया जाए तो वह बातें अपने आप को ख़ुद ही साबित कर देती है जैसे अगर कोई आदमी किसी के बारे में कहे कि यह जो बैठे हुए हैं यह बहुत अच्छी स्पीच देते हैं लेकिन किसी को चुप बैठे हुए देखकर कोई नहीं मान सकता कि अच्छी स्पीच देते हैं और जो इस बात को नहीं मान रहा है वह ग़लत भी नहीं कर रहा है क्योंकि उसने अभी तक बोलते हुए देखा ही नहीं है। यहाँ अपनी बात साबित करने के लिए सुबूत लाना होगा लेकिन अगर कोई स्पीच दे रहा हो और उस वक़्त कोई आदमी कहे कि यह अच्छी स्पीच देते हैं तो हर आदमी मान लेगा बल्कि अगर कोई इस बात का सुबूत माँगे तो सब लोग हंसेंगे और सुबूत मांगने वाले को लोग पागल कहेंगे क्योंकि जिसने बोलते हुए देख लिया है वह जानता है कि सामने वाला बोलना जानता है। अब अच्छा बोलना या ग़लत बोलना यह एक अलग चीज़ है।

इसका मतलब यह है कि कुछ मामले ऐसे हैं कि अगर उन्हें समझ लिया जाए तो मामले को समझ लेना ही दलील और सुबूत होता है।

अपनी वहदानियत यानी अपने एक होने का सुबूत सब से पहले ख़ुद अल्लाह ने क़ुरआन में दे दिया हैः

> अल्लाह ख़ुद गवाह है कि उसके सिवा कोई ख़ुदा नहीं है।[1]

तौहीद पर सब से पहली गवाही ख़ुद अल्लाह ने दी है। अल्लाह इस बात की गवाही दे रहा है कि उसके सिवा कोई दूसरा ख़ुदा नहीं है। अब कोई पलट कर अल्लाह से पूछ सकता है कि ख़ुद आप ही एलान कर रहे हैं कि मेरे सिवा दूसरा कोई ख़ुदा नहीं है लेकिन इस बात का सुबूत क्या है? यह मुक़दमा माना कैसे जाएगा? इस मुक़दमे में जो दावा कर रहा है वही ख़ुद गवाही भी दे रहा है जबकि दावा कोई करता है और गवाही कोई दूसरा देता है। अल्लाह ने कहा कि मैं ख़ुद ही दावा कर रहा हूँ और मैं ख़ुद ही गवाही भी दे रहा हूँ।

मामला बिल्कुल साफ़ है क्योंकि अगर किसी ने अल्लाह का मतलब समझ लिया तो उसे अपने आप पता चल जाएगा कि अल्लाह एक ही होगा, दो नहीं हो सकते। अब अगर किसी को अल्लाह के एक होने में शक हो तो इसका मतलब यह है कि उसे पता ही नहीं है कि अल्लाह कहते किसे हैं, वह जानता ही नहीं है कि बनाने वाला, पालने वाला, रोज़ी-रोटी देने वाला और मालिक किसे कहते हैं क्योंकि जो यह जानता है कि बनाने वाला और पालने वाला कौन है वह यह भी जानता है कि बनाने वाला और पालने वाला बस एक होता है, दो हो ही नहीं सकते यानी दुनिया का बनाने वाला एक होगा, दो नहीं हो सकते।

अल्लाह ने ख़ुद अपने आप को अपनी वहदानियत यानी अपने एक होने का सुबूत बनाया है और गवाही भी दी है जिसका मतलब यह है कि अगर कोई उसके कमाल को पहचान ले तो

---

[1] आले इमरान/18

वह यह भी जान लेगा कि जैसा अल्लाह है वैसा कोई दूसरा हो ही नहीं सकता।

दीन की बुनियाद ही इस बात पर रखी गई है कि दीन के मामले दूसरों की गवाही से तय नहीं होते बल्कि ख़ुद अल्लाह तय करेगा। यह नहीं हो सकता कि चार आदमी खड़े होकर कहने लगें कि यह अल्लाह है।

कोई आदमी यह भी कह सकता है कि कोर्ट दो गवाहों की गवाही से पूरी बिल्डिंग दूसरे को दे दी जाती है या किसी का बैंक एकाउंट किसी और के नाम कर दिया जाता है। जब दो-दो गवाहों के ऊपर पूरी-पूरी बिल्डिंग और पूरा-पूरा बैंक एकाउंट दूसरे के नाम हो सकता है तो अगर चार आदमी यह कह दें कि यह अल्लाह है तो उनकी गवाही से अल्लाह क्यों नहीं माना जाएगा ?

अक़ीदे (आस्था) का मामला पैसे से जुड़ी चीज़ों से अलग है और न ही यह कोर्ट में लड़े जाने वाले किसी मुक़द्मे जैसी कोई चीज़ है। अगर कोई अल्लाह बनने की ताक़त नहीं रखत तो चार क्या चार लाख आदमी भी गवाही दे दें तब भी उसे अल्लाह नहीं माना जा सकता। इसके उलट अगर किसी में ख़ुदाई की ताक़त पाई जाती है तो चाहे कोई गवाह हो या न हो वह अल्लाह ही रहेगा।

यह मामला गवाही से तय नहीं होगा बल्कि जिसको अल्लाह कहा जाता है उसके कमाल को देखकर उसका अल्लाह होना तय होगा। अगर अल्लाह की ख़ुदाई गवाहों से तय होगी तो अल्लाह तो उस वक़्त भी था जब कोई गवाह सिरे से था ही नहीं। अल्लाह था मगर उसके साथ कुछ भी नहीं था क्योंकि सब को तो उसी ने बनाया है। नबी, रसूल और इमाम उस ने बनाए हैं, ज़मीन-आसमान उसने बनाए हैं और यह सारी दुनिया उस ने बनाई है। एक स्टेज यह है कि वह है और अभी उसने किसी को नहीं बनाया है। जब अभी उसने किसी को बनाया ही नहीं है तो इस स्टेज में उसके अल्लाह होने की गवाही कौन देगा ?

अल्लाह के रसूल[स०] की मशहूर हदीस हैः

सब से पहले अल्लाह ने मेरा नूर बनाया था।

इसका मतलब यह है कि बनाने वाला अलग है और बनने वाला अलग। अगर कोई बनाने वाला न होता तो अल्लाह के रसूल[स०] का नूर कैसे बनता? इसका सीधा सा मतलब यह है कि जिस जगह अल्लाह का नूर था वहाँ यह नूर भी नहीं था। पहला नूर भी उसी ने बनाया और उसके बाद आने वाली चीज़ भी उसी ने बनाई। लेकिन जहाँ वह था वहाँ और कोई नहीं था। वह सब से पहले से है और एक अकेला है। तभी तो हम कहते हैं कि अल्लाह कुछ करने में कभी भी किसी से कोई राए नहीं मांगता और न ही किसी को बनाने में किसी से कुछ पूछता है।

इसीलिए नहजुल बलाग़ा में हज़रत अली[अ०] ने फ़रमाया हैः

> ख़बरदार! पालने वाले के बारे में सोचना भी मत कि वह किसी राए देने वाले का मोहताज है।

कोई बिल्डिंग बनाना हो तो इंजीनियर को नक़्शे की ज़रूरत होती है, मज़दूरों की ज़रूरत होती है और न जाने किस-किस चीज़ की ज़रूरत होती है लेकिन अल्लाह ऐसा नहीं है। उसे न कोई नक़्शा चाहिए और न किसी की राए। यहाँ तक कि वह अपनी सोच का मोहताज भी नहीं है कि पहले सोचे और उसके बाद बनाए। सोच बनाने वाले और होते हैं, सोचने वालों को बनाने वाला और होता है।

अल्लाह ने दुनिया को बनाया और वह भी बिना सोचे कि कैसे बनाना है। ऐसा बनाऊँ तो कहीं ऐसा न हो जाए या वैसा बनाऊँ तो कहीं वैसा न हो जाए। समझदार बना दूँ तो कहीं बग़ावत पर न उतर आए, दिमाग़ी ताक़त बढ़ा दूँ तो कहीं मुक़ाबले पर न खड़ा हो जाए या ऐसा नासमझ बना दूँ कि किसी काम का ही न रहे लेकिन उसने बनाया और पूरे कमाल वाला बनाया। कमाल वाला बनाना उसका काम था और इस कमाल से ख़ुद को ऊपर ले जाना आदमी का काम है।

बहरहाल अल्लाह अपने कमाल की वजह से अल्लाह है। सारे कमाल वाले दुनिया में आ जाएं वह तब भी अल्लाह है और सारे कमाल वाले दुनिया से चले जाएं वह तब भी अल्लाह है।

इसीलिए हमारे जैसों को समझाने के लिए क़ुरआन ने कहा हैः

ज़मीन-आसमान के बनने में, दिन-रात के आने- जाने में, लोगों की भलाई के लिए दरियाओं में चलने वाली कश्तियों में, आसमान से बरसने वाले पानी में जिससे अल्लाह ने बंजर ज़मीनों को उपजाऊ बना दिया है और इसमें तरह-तरह के जानवर फैला दिए हैं और हवाओं के चलाने में और ज़मीन-आसमान के बीच उसका हुक्म मानने वाले बादलों में समझदारों के लिए अल्लाह की निशानियाँ पाई जाती हैं।[1]

यह आसमान सुबूत है कि अल्लाह है, यह ज़मीन सुबूत है कि अल्लाह है, यह दिन-रात का आना-जाना सुबूत है कि अल्लाह है, दरियाओं में बहता हुआ पानी सुबूत है कि अल्लाह है, आसमान से बरसता हुआ पानी सुबूत है कि अल्लाह है, ज़मीन से उगती हुई हरियाली सुबूत है कि अल्लाह है और यह ज़मीन पर चलते हुए जानदार सुबूत हैं कि अल्लाह है।

हम अल्लाह की ज़ात को उसकी ज़ात से समझ ही नहीं सकते थे इसीलिए उसने हम से कहा कि इन सारी चीज़ों को देखकर समझ लो कि जिसने इतना बड़ा आसमान, ज़मीन, चाँद-सूरज बना दिया वह ख़ुद कितना बड़ा होगा? यह सारी चीज़ें हमें समझाने के लिए हैं वरना उसे अपने अल्लाह होने को साबित करने के लिए किसी दलील या सुबूत की ज़रूरत नहीं है। उसे उसके कमाल से ही समझा जा सकता है। उसका कमाल ही उसके अल्लाह होने का सुबूत है, चाहे कोई गवाही देने वाला हो या न हो क्योंकि जितने भी गवाही देने वाले हैं वह सब के सब बाद में आए हैं।

दो आदमियों में झगड़ा हो रहा था कि यह मकान किसका है? चार आदमी आए और उन्होंने कहा कि यह मकान उस आदमी का है। उसके बाप का मकान था। बाप के मरने बाद अब बेटे को मिल गया है। गवाहियाँ सुनकर मजिस्ट्रेट ने भी फ़ैसला सुना दिया कि मकान उसी आदमी का है। मुक़दमे का फ़ैसला हो गया। अगले दिन वह चारों फिर मजिस्ट्रेट के पास गए और उससे कहा

---

[1] सूरए बक़रा/164

कि हम लोग मजबूर हो गए थे क्योंकि हालात ही कुछ ऐसे बन गए थे। हमें मजबूरी में कहना पड़ गया कि मकान उसका है वरना वह मकान उसका नहीं है। गवाहों ने गवाही वापस ले ली तो मजिस्ट्रेट ने भी मकान वापस करा दिया। इसका मतलब यह है कि अगर गवाह कह दे हाँ तो हाँ और अगर नहीं कह दे तो फ़ाइल बंद।

क्या अल्लाह भी अपनी ख़ुदाई में गवाहों का मोहताज है? ऐसा नहीं है बल्कि हमारी गवाही से उसकी ख़ुदाई पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता क्योंकि उसकी ख़ुदाई उसके कमाल से साबित होती है।

दीन अपने अक़ीदों में कमाल वाले को उसके कमाल से मनवाता है। गवाही देने वालों की गवाही और न मानने वालों के न मानने से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

जब कुछ भी नहीं था वह तब भी अल्लाह था और जब सब कुछ मिट जाएगा वह तब भी अल्लाह रहेगा। उसकी ख़ुदाई का इस दुनिया के बनने या मिटने से कोई कनेक्शन नहीं है।

यही वह जगह है जहाँ से इस्लाम का पहला अक़ीदा शुरू होता है कि अल्लाह को मानो लेकिन किसी के कहने से नहीं बल्कि उसके कमाल को देखकर। तौहीद को समझने और पहचानने के बाद अब जो भी अपनी ख़ुदाई का एलान करे तो पहले यह देखो कि वह अल्लाह बनने के लायक़ है भी कि नहीं। अगर पत्थर बोलने लगे कि मैं अल्लाह हूँ तो क्या कहने से वह अल्लाह बन जाएगा? पेड़ कहने लगे कि मैं अल्लाह हूँ तो क्या इतना कहने से पेड़ अल्लाह हो जाएगा? इतिहास में अब तक न जाने कितने लोगों ने नबुव्वत का दावा किया है लेकिन कितने लोगों ने उनका साथ दिया? न उनके कहने से किसी ने उन्हें नबी माना और न किसी की गवाही से माना क्योंकि किसी में भी नबी बनने की ताक़त नहीं थी। वैसे भी दीन का अक़ीदा कहने से नहीं बल्कि कमाल से बनता है। अगर अल्लाह के रसूल[स०] ने दुनिया वालों के सामने अपना कमाल न रखा होता तो कोई भी उन्हें नबी न मानता। नबुव्वत कमाल के दम पर मानी जाती है

जिसे हम मोजिज़ा[1] कहते हैं। जिस तरह अल्लाह को उसके कमाल की वजह से मानते हैं उसी तरह नबी को भी उनके उस कमाल की वजह से मानते हैं जो अल्लाह ने उन्हें दिया था।

दीन में हर कमाल वाले को उसके कमाल से पहचाना जाता है। यह बात तभी समझ में आ सकती है जब आदमी तौहीद को ठीक से पहचान ले। वह अकेला अल्लाह है और उससे हटकर कोई अल्लाह नहीं है क्योंकि उसके जैसे कमाल वाला न कोई है और न हो सकता है।

अब अगर कोई पूछ ले कि अल्लाह के होने का सुबूत क्या है तो हम कह देंगे कि इतना बड़ा आसमान क्या अपने आप बन गया है? दूसरे ने कहा कि सुबूत क्या है तो हम जवाब देंगे कि इतना बड़ा चाँद या सूरज क्या बिना बनाने वाले के बन गया है? क़ुरआन ने भी हमें इसी तरह तौहीद समझाई है। कभी सूरज दिखाकर, कभी चाँद दिखाकर, कभी आसमान दिखाकर, कभी सितारे दिखाकर, कभी बारिश की बूँदें दिखाकर और कभी रेगिस्तान दिखाकर लेकिन सवाल यह है कि हमें समझाने के लिए इन सारी चीज़ों का सहारा क्यों लिया गया? ऐसा इसलिए है क्योंकि यह सारी चीज़ें हमारे लिए अल्लाह के होने का सुबूत बन सकती हैं।

हम में से हर एक के लिए तो यह सारी चीज़ें सुबूत बन सकती हैं लेकिन भला उसके लिए कैसे सुबूत बन सकती हैं जिसे अल्लाह ने तब पैदा किया था जब दुनिया में कुछ भी नहीं बनाया था बल्कि दुनिया ही नहीं बनाई थी। न सूरज, न चाँद, न ज़मीन, न आसमान, न सितारे, कुछ भी नहीं था। वह अल्लाह को कैसे पहचानेगा? सब ने अल्लाह को पहचाना है तो उसकी बनाई चीज़ों को देखकर लेकिन उसके रसूल मोहम्मद[स०] ने अल्लाह को अल्लाह से पहचाना है।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं:

ऐ अल्लाह जिसने हमें अपना रास्ता दिखाया है।

---

[1] चमत्कार

यह वह अल्लाह है जिसका कमाल ही उसे पहचानने का रास्ता है। वह ज़मीन-आसमान का मोहताज नहीं है कि पहले इन्हें बनाए और फिर पहचाना जाए।

एक आलिम से किसी ने पूछा कि दुआए सबाह किस की दुआ है? उन्होंने कहा कि हज़रत अली[अ०] की। उसने कहा कि इस का सुबूत क्या है? उन्होंने कहा कि दुआए सबाह। ख़ुद दुआए सबाह ही इस बात का सुबूत है कि यह दुआ हज़रत अली[अ०] की है क्योंकि सारी दुनिया में एक भी आदमी ऐसा नहीं मिलेगा जो यह कह सकता हो कि हम ने अल्लाह को अल्लाह से पहचाना है।

इसी तरह जब यह सवाल उठा कि इस बात का क्या सुबूत है कि नहजुल बलाग़ा हज़रत अली[अ०] की किताब है तो फिर इसी बात को दोहराया गया कि नहजुल बलाग़ा के हज़रत अली[अ०] की किताब होने का सुबूत ख़ुद नहजुल बलाग़ा ही है। सारी दुनिया में कौन है जो इस तरह की बातें कर सकता है? कौन है जो इस ढंग से बात कर सकता है? अगर इस्लाम का सारा इतिहास उठाकर देखा जाए तो हज़रत अली[अ०] से हटकर बस एक इब्ने अब्बास दिखाई पड़ते हैं जिनका नाम उस वक़्त के पढ़े-लिखे लोगों में आता है। बाक़ी सब या तो बादशाह गुज़रे हैं या ख़लीफ़ा या पैसे वाले या ऊँची पोस्ट वाले। एक बार किसी ने इब्ने अब्बास से ही पूछा कि आप मुसलमानों के इतने बड़े आलिम हैं, आप ही बताइए कि आपके हिसाब से हज़रत अली[अ०] का इल्म कैसा है? इब्ने अब्बास ने उससे पूछा कि क्या तुम ने कभी दरिया देखा है? उसने कहा कि हाँ। इब्ने अब्बास ने कहा कि बस यूँ समझ लो कि हज़रत अली[अ०] दरिया हैं और मैं बस एक बूँद।

इस बात का सब से अच्छा सुबूत ख़ुद हज़रत अली[अ०] ने ही दिया है। इब्ने अब्बास ने हज़रत अली[अ०] से कहा कि मैं *बिस्मिल्लाह* की तफ़सीर (Explanation) जानना चाहता हूँ। हज़रत अली[अ०] ने *बिस्मिल्लाह* की तफ़सीर शुरू कर दी। पूरी रात बीत गई लेकिन *बिस्मिल्लाह* की तफ़सीर नहीं सिमट पाई। जिस पर हज़रत अली[अ०] ने कहा कि ऐ इब्ने अब्बास! यह रात क्या है,

अगर वक़्त साथ देता तो मैं तुम्हें *बिस्मिल्लाह* के बारे में इतनी बातें बताता कि सत्तर ऊँटों पर तफ़सीर का बोझ रखना पड़ता।

अगर कोई इब्ने अब्बास के कमाल को पहचान ले तो वह अपने आप हज़रत अली[अ०] को भी पहचान लेगा जिन्होंने इब्ने अब्बास को *बिसमिल्लाह* की तफ़सीर पढ़ाई थी।

अल्लाह ने इस दुनिया में अपने एक होने के न जाने कितने सुबूत रख दिए है। उसके बाद ख़ुद आदमी के अन्दर भी न जाने कितने सुबूत रख छोड़े हैं। उसके बाद भी कहा कि अगर मुझे पहचानना है तो मेरे कमाल से मुझे पहचानो कि मैं अल्लाह हूँ। मेरे सिवा कोई दूसरा अल्लाह नहीं है।

एक बार हज़रत अली[अ०] ने अपने एक बेटे मोहम्मद हनफ़िया को तौहीद की दलीलें और सूबुत बताए थे। उन में से एक दलील बिल्कुल सामने की थी। हज़रत अली[अ०] ने उनसे कहा कि बस यूँ समझ लो कि अगर अल्लाह का कोई शरीक होता यानी अल्लाह के सिवा कोई दूसरा भी अल्लाह होता तो उसने भी अपने नबी और रसूल भेजे होते। वह ख़ाली बैठा हुआ दुनिया को थोड़ी देख रहा होता। जो नबी हमारे अल्लाह ने भेजे हैं उनसे हटकर दूसरा कोई नबी कहीं से कभी आया ही नहीं है। इसका मतलब बस यही है कि दूसरा कोई अल्लाह है ही नहीं। हज़रत अली[अ०] ने कहा कि ऐ मोहम्मद हनफ़िया! अल्लाह के होने और एक होने का सब से बड़ा सुबूत यही है कि यह सारी दुनिया उसी एक अल्लाह की बनाई हुई चल रही है। अगर कोई दूसरा अल्लाह होता तो उसने भी कोई दुनिया बनाई होती और वह भी अपने नबियों को भेजता, अपना दीन भेजता और अपना क़ानून भेजता।

रसूले इस्लाम[स०] से छः सौ साल पहले बनी इस्राईल के आख़िरी नबी के बारे में तो कोई भी कुछ ग़लत या झूठ नहीं कह सकता क्योंकि ग़लत बात उसके बारे में तो की जा सकती है जो मर जाए लेकिन जो अभी ज़िन्दा है उसके बारे में कोई ग़लत बात कैसे कही जा सकती है क्योंकि वह फ़ौरन कह देगा कि झूठ है। बनी इस्राईल के आख़िरी नबी का नाम हजरत ईसा[अ०] है। क़ुरआन ने उनकी ज़बानी कहा है कि मैं भी अल्लाह का भेजा हुआ नबी हूँ और मैं तुम्हें अपने बाद आने वाले नबी की ख़बर

भी दे रहा हूँ जिसका नाम अहमद है। जब अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] आए तो उन्होंने ने भी कहा कि जो कुछ मुझ से पहले आ चुका है मैं उस सब को मान रहा हूँ। ऐसा इसलिए है क्योंकि सारे नबी एक अल्लाह के भेजे हुए नबी थे। इसीलिए जो पहले आया उसने बाद वाले की ख़बर दी और जो बाद में आया उसने पहले वाले को सही बताया। एक कहता रहा कि वह आएंगे और दूसरे ने कहा कि वह आए थे। अगर कहीं दस-बीस लोग इकट्ठा हो जाएं तो झगड़े शुरू हो जाते हैं लेकिन यहाँ एक लाख चौबीस हज़ार नबियों में से हर एक बस एक ही बात कह रहा है जिसका मतलब यह है कि सारे एक ही अल्लाह के भेजे हुए हैं।

यह इन्सानों की बात थी। इसके बाद आसमानी किताबों की बात शुरू होती है। हर पिछली किताब अगली किताब की ख़बर देनी वाली है। एक लाख चौबीस हज़ार नबी आए और सब ने एक ही बात कही। इतनी किताबें आईं उन सब में भी एक ही बात मिली। इसका मतलब यह है कि जब बात कलम-ए-तौहीद (अल्लाह की तौहीद) से शुरू होती है तो तौहीदे कलमा पर जाकर ख़त्म होती है यानी सारे मुसलमान एक ही बात कहते हैं। जब सारे नबी अल्लाह के बनाए हुए होते हैं तो किसी में भी किसी तरह का कोई झगड़ा नहीं होता। सैंकड़ों आसमानी किताबें होंगी लेकिन सब की सब एक ही बात दोहराने वाली होंगी। यह दुनिया में होता है कि एक कुछ कहता है और दूसरा कुछ, यह उसको बुरा कहता है और वह इसे बुरा कहता है। इसलिए जब आपस में एकता न दिखाई दे तो समझ लेना चाहिए कि समाज में तौहीद की जड़ें कमज़ोर हो रही हैं।

इसीलिए जब रसूल[स०] इस दुनिया से गए तो वह भी यह कहकर गए कि मेरे बाद 12 इमाम होंगे। यह नहीं कहा कि मैं तो जा रहा हूँ, अब देखो इसके बाद क्या होता है और अल्लाह कितने इमाम भेजता है। इतना ही नहीं बल्कि रसूल[स०] ने आने वालो इमामों के नाम भी बताए।

सूरए निसा की आयत/82 में हैः

> अगर यह क़ुरआन अल्लाह के सिवा किसी और की तरफ़ से आया होता तो इसमें बड़ा इख़्तिलाफ़ (झगड़ा) होता।

क़ुरआन में 6000 से ज़्यादा आयतें हैं लेकिन लेकिन कोई भी आयत किसी दूसरी आयत से नहीं टकराती है। क़ुरआन की 6000 से ज़्यादा आयतें, एक लाख चौबीस हज़ार नबी और सारी आसमानी किताबें, सब ने एक ही बात कही है। कहीं कोई झगड़ा या फ़र्क़ दिखाई नहीं देता। ऐसा इसलिए है क्योंकि सब के सब एक अल्लाह के भेजे हुए थे। जब हर चीज़ के पीछे तौहीद है तो फ़र्क़ भला कैसे पैदा हो पाएगा? जब अल्लाह के भेजे हुए लोग आते हैं तो फिर झगड़ा नहीं होता है क्योंकि सब एक ही बात कहते हैं और जितनी तौहीद की जड़ें समाज में फैलती जाएंगी उतनी ही सब की बातें भी एक होती जाएंगी।

(5)

अल्लाह की इबादत

तौहीद की चार स्टेज हैं:

(1) *तौहीदे ज़ात* यानी अल्लाह के एक होने को ऐसे माना जाए जिसमें किसी भी तरह के दो न हो सकते हों। ऐसे *एक* अल्लाह को माना जाए जो न दो से मिलकर बना हो और न जिसके दो हो सकते हों।

(2) *तौहीदे सिफ़ात* यानी इस बात को भी माना जाए कि अल्लाह की सिफ़ात[1], ऐने ज़ात हैं जिसका मतलब यह है कि उसकी सिफ़ात और उसके कमाल कहीं अलग से नहीं आए हैं कि वह किसी का मोहताज हो। अल्लाह का हर कमाल उसका अपना है और वह अपने कमाल में किसी का मोहताज नहीं है। इसके उलट दूसरे जितने भी कमाल वाले हैं अपने कमाल में वह सब अल्लाह के मोहताज हैं।

(3) *तौहीदे अफ़आल* यानी अल्लाह अपने कामों में भी किसी का मोहताज नहीं है। कोई उसके कामों में उसका साथी नहीं है क्योंकि वह अपने सारे काम ख़ुद ही करता है। अगर दुनिया को

---

[1] गुण

बनाता है तो ख़ुद ही बनाता है और अगर अपने बन्दों को पालना हो तो ख़ुद ही पालता है।

(4) *तौहीदे इबादत* यानी हर आदमी को चाहिए कि बस अल्लाह के सामने ही अपना सर झुकाए। अल्लाह के सिवा किसी के भी आगे सर नहीं झुकाया जा सकता।

क़ुरआन ने बार-बार इस सच्चाई के बारे में हमारा ध्यान अपनी तरफ़ मोड़ा हैः

> तुम्हारे पालने वाले ने तय किया है कि ख़बरदार! उसके सिवा किसी की इबादत न करना।[1]
>
> जो अल्लाह से मिलना चाहता है उसे चाहिए कि अच्छे काम करे और उसकी इबादत में किसी को उसका हिस्सेदार न बनाए।[2]

वह अकेला माबूद[3] है और उससे हटकर कोई माबूद नहीं है कि जिसके आगे सर झुकाया जा सके।

मुसलमानों का कलमा है *ला इलाहा इल लल्लाह* जिसका मतलब यह है कि अल्लाह के सिवा कोई ख़ुदा नहीं है लेकिन सवाल यह है कि किसने कह दिया कि अल्लाह के सिवा कोई ख़ुदा नहीं है? यह जो करोड़ों आदमी पत्थरों, पेड़ों और न जाने किन-किन चीज़ों के आगे अपना सर झुका रहे हैं, क्या यह सब इनके ख़ुदा नहीं हैं? जो लोग चाँद-सूरज की ख़ुदाई को मानते हैं क्या चाँद-सूरज उनके ख़ुदा नहीं हैं? तीन सौ साठ ख़ुदा तो ख़ान-ए-काबा के अन्दर ही रखे हुए थे, जिन लोगों ने लाकर रखा था उनसे पूछा जाए तो वह यही कहेंगे कि यह सब हमारे ख़ुदा हैं।

इधर हम कहते हैं कि अल्लाह के सिवा कोई ख़ुदा नहीं है जबकि दुनिया में ख़ुदा तो करोड़ों दिखाई पड़ते हैं। यहाँ तक कि एक ख़ुदा तो ख़ुद हमारे ही अन्दर बैठा हुआ है जिसके बारे में क़ुरआन ने भी हमें बताया हैः

---

[1] सूरए इस्रा/23
[2] सूरए कहफ़/110
[3] जिसकी इबादत की जाए और जिसके आगे अपना सर झुकाया जाए।

ऐ रसूल! क्या आपने उसे देखा है जिसने अपनी ख़्वाहिशों[1] को ही अपना ख़ुदा बना लिया है?[2]

पत्थर से लेकर सूरज तक और बाहर से लेकर अन्दर तक ख़ुदाओं की लाइन लगी हुई है लेकिन सब कहते हैं कि अल्लाह के सिवा कोई ख़ुदा नहीं है जबकि ख़ुदा तो बहुत सारे हैं।

यहाँ पर अगर एक बात को समझ लिया जाए तो मामला आसानी से हल हो जाएगा और साथ ही साथ दूसरे मामले भी हल हो जाएंगे। यह न कहिए कि कोई ख़ुदा नहीं है क्योंकि ख़ुदा तो बहुत सारे हैं। जिसकी इबादत की जाए और जिसके आगे सर झुका दिया जाए वही ख़ुदा बन जाता है। ख़ुद क़ुरआन ने भी कहा है कि ऐ आदम की औलाद! क्या हम ने तुम से इस बात का वादा नहीं लिया कि शैतान के आगे सजदा न करना?

इसका मतलब यह है कि सब बेटे तो आदम के हैं लेकिन सजदा शैतान को करते हैं। अगर आदमी शैतान को सजदा करेगा तो उसे ख़ुदा ही कहा जाएगा। जिसको सजदा करने वाले मिल जाएं उसे ख़ुदा ही कहा जाता है।

इसलिए यह कहना चाहिए कि जिसे सच में ख़ुदा कहा जा सके ऐसा ख़ुदा अल्लाह के सिवा कोई नहीं है।

ख़ुदा तो बहुत सारे हैं लेकिन अल्लाह के जैसा बरहक़ (सही) ख़ुदा कोई और नहीं है। अब चाहे लाखों-करोड़ों ख़ुदा बन जाएं लेकिन अल्लाह के जैसा कोई ख़ुदा नहीं है।

तौहीद बस यही है कि चाहे लाखों-करोड़ों ख़ुदा बन जाएं लेकिन अल्लाह के जैसा कोई ख़ुदा नहीं है। इस्लाम बस एक ऐसे अल्लाह को मानता है जिसकी इबादत की जा सकती है। बाक़ी सब बन्दे हैं। इसीलिए हम कलमा पढ़ते हैं तो कहते हैं:

मोहम्मद[स०] अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल हैं।

अल्लाह के बाद उसके रसूल[स०] से बड़ा इस दुनिया में कोई नहीं है। शुरू से लेकर आज तक और आज से लेकर क़यामत तक उनसे बड़ा कोई इन्सान न पैदा हुआ है और न पैदा होगा।

---

1 इच्छाओं
2 सूरए फ़ुरक़ान/43

अल्लाह से हटकर किसी को ख़ुदा मानने की बात तो बहुत दूर है इस्लाम तो रसूल[स०] को भी अल्लाह का बन्दा मानता है। सब अल्लाह के बन्दे हैं मगर सब अपनी बन्दगी में अलग-अलग हैं क्योंकि किसी की बन्दगी कमज़ोर है और कोई अल्लाह की बन्दगी में बहुत आगे है। हज़रत ईसा[अ०] ने इस दुनिया में आँख खोली तो अपने झूले में सब से पहले यही कहा था कि मैं अल्लाह का बन्दा हूँ लेकिन दुनिया फिर भी नहीं समझ पाई और उन्हें अल्लाह का बेटा मान लिया। यह बन्दगी का कमाल है कि ख़ुदाई रिश्ता मिलने वाला था मगर हज़रत ईसा ने पहले ही तोड़ दिया।

यह हज़रत ईसा[अ०] की बन्दगी थी मगर इस से भी आगे अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] की बन्दगी है क्योंकि हज़रत ईसा[अ०] ने अपने लिए कहा था कि मैं अल्लाह बन्दा हूँ मगर अपने आख़िरी रसूल[स०] को तो ख़ुद अल्लाह ने अपना बन्दा कहा हैः

पाक है वह जो अपने बन्दे को ले गया।

जब अल्लाह ने अपना बन्दा कहकर अपने पास बुलाया तो उसके रसूल[स०] ने भी उसकी लाज रख ली। अल्लाह के इतने पास जाने के बाद भी रसूल[स०] बैठ नहीं गए बल्कि अल्लाह के सामने अपना सर झुका दिया। मतलब यह था कि जब अल्लाह ने मुझे अपना बन्दा कहकर बुलाया है तो मेरी ड्युटी भी बनती है कि वहाँ पहुँचते ही पहला काम यह करूँ कि उसके सामने सर झुका दूँ।

इस पूरी दुनिया में अल्लाह का कोई घर नहीं है लेकिन दो जगहों को उसने अपना घर कहा हैः एक अर्शे आज़म जो आसमानों में है और एक ख़ान-ए-काबा जो ज़मीन पर है।

हज़रत मरयम[अ०] अल्लाह के घर में थीं लेकिन जब वक़्त हो गया तो उनसे अल्लाह ने कहा कि मरयम! अब तुम यहाँ से बाहर चली जाओ। फ़ातिमा बिन्ते असद बाहर थीं लेकिन जब उनका वक़्त आया तो उनसे कहा कि तुम अन्दर चली जाओ। ख़ान-ए-काबा की दीवार फटी और वह काबे के अन्दर चली गईं। एक से कहा कि बाहर जाओ और एक से कहा कि अन्दर जाओ।ऐसा इसलिए लिए हुआ क्योंकि दुनिया हज़रत ईसा[अ०] और हज़रत अली[स०] दोनों के बारे में ही सही रास्ते से बहकने वाले

थे। हज़रत ईसा[अ०] को लोग आगे चलकर अल्लाह का बेटा और हज़रत अली[स०] को ख़ुदा मानने वाले थे। इसलिए अल्लाह ने यह दोनों ही रास्ते बन्द कर दिए। अल्लाह ने हज़रत मरयम[अ०] से कहा कि ऐ मरयम! तुम यहाँ से बाहर चली जाओ, अगर कहीं तुम्हारा बेटा मेरे घर में जन्मा तो लोगों को कहने का बहाना मिल जाएगा कि जिसका बेटा था उसी के घर में तो जन्मा और फिर लोग ईसा[अ०] को अल्लाह का बेटा कहने लगेंगे। आगे चलकर हज़रत अली[अ०] की माँ फ़ातिमा बिन्ते असद से कहा कि तुम मेरे घर में आ जाओ ताकि दुनिया वाले यह समझ जाएं कि जो जन्म लेता है वह अल्लाह नहीं हो सकता क्योंकि आदमी का कमाल ख़ुदा बनने में नहीं है बल्कि उसका कमाल अल्लाह का बन्दा बनने में है। अगर सारी दुनिया ख़ुदा बन जाए तो ऐसी ख़ुदाई में कुछ नहीं रखा। अल्लाह की बात अलग है। अल्लाह का कमाल यह है कि वह अल्लाह हो लेकिन अगर आदमी सही से अल्लाह का बन्दा बन जाए तो वह भी बहुत ऊँचा हो जाता है।

इसकी मिसाल बिल्कुल सामने की है। लाखों मन लकड़ी इकट्ठी हो गई। आग की लपटें आसमान को छूने लगीं। अब बात बस इतनी सी थी कि अल्लाह के एक बन्दे को उस आग में डालना था। यह सारी बात क़ुरआन में लिखी हुई है। उस वक़्त का बादशाह नमरूद अल्लाह के नबी हज़रत इब्राहीम[अ०] को उस आग में डालना चाहता था क्योंकि वह अल्लाह को नहीं मानता था और हज़रत इब्राहीम[अ०] अल्लाह की ख़ुदाई का एलान कर रहे थे। उधर नमरूद अपने आपको ख़ुदा मानता भी था और मनवाता भी था। जब आग तैयार हो गई तो अब सवाल यह उठा कि इतनी भयानक आग में इब्राहीम[अ०] को फैंका कैसे जाए? सब तरकीबें सोचने लगे। आख़िर में यह तय पाया कि एक मिनजिनीक़ (Catapult) में रखकर दूर से फेंक दिया जाए।

अब कोई नमरूद से कहता कि एक बादशाह सलामत! आप तो ख़ुद ही ख़ुदा हैं। आसान सी बात है, इब्राहीम का हाथ पकड़िए और बीच आग में ले जाकर छोड़ दीजिए। फिर जब तक इब्राहीम[अ०] पूरी तरह से जल न जाएं वापस न आइएगा ताकि सब को पता चल जाए कि ख़ुदा से जंग करने का नुक़सान क्या

होता है। इसके बाद कोई आप से टकराने की हिम्मत भी नहीं कर सकेगा। मगर नमरूद यह बात सोचने के लिए भी तैयार नहीं था और न ही कोई यह राय देने के लिए तैयार था। अजीब सी बात है कि नमरूद ख़ुदाई का एलान करने के बाद भी आग से डर रहा था लेकिन इब्राहीम[अ०] आग में जाते हुए भी बिल्कुल आराम से थे। बीच में किसी फ़रिश्ते ने पूछा भी कि ऐ इब्राहीम! क्या आपको सहारा दूँ? इब्राहीम[अ०] ने कहा कि मुझे सहारे की ज़रूरत तो है लेकिन तुम्हारे सहारे की ज़रूरत नहीं है। मेरा अल्लाह मेरा बचाने वाला है।

यह है असलियत कि बन्दों के अल्लाह बन जाने से कुछ नहीं होता बल्कि जो कुछ है वह बस अल्लाह का बन्दा बनने में है।

बहरहाल इस्लाम में माबूद[1] बस एक है। अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं है। सब उसके बन्दे हैं। बस फ़र्क़ यह है कि किसी की बन्दगी कमज़ोर है और किसी की बन्दगी मज़बूत है। किसी की इबादत कम है और किसी की इबादत ज़्यादा। यहाँ तक कि अगर ख़ुद अल्लाह अपने किसी बन्दे के सामने दूसरों के सर झुका दे तब भी हम उसे अल्लाह नहीं मान सकते।

इस बारे में ख़ुद क़ुरआन ने पूरी कहानी सुनाई है:

> तुम सब सजदे में गिर पड़ना। जिसके बाद सारे फ़रिश्तों ने सजदा कर लिया।[2]

सारे फ़रिश्तों ने सजदा कर लिया तो क्या हज़रत आदम[अ०] अल्लाह हो गए? कोई मुसलमान नहीं कह सकता कि सारे फ़रिश्तों के आदम को सजदा करने के बाद वह अल्लाह हो गए।

सारे फ़रिश्तों के सजदा करने के बाद भी हज़रत आदम[अ०] इसलिए अल्लाह नहीं हुए क्योंकि सजदा करने का हुक्म अल्लाह ने दिया था और सजदा करवाने वाला अल्लाह था। अगर हज़रत आदम[अ०] फ़रिश्तों से सजदा करने के लिए कहते तो उनका अल्लाह होना तो दूर की बात है, ख़ुद उनकी तौहीद ख़तरे में पड़ जाती।

---

[1] जिसके आगे सर झुकाया जाए और जिसकी इबादत की जाए।

[2] सूरए साद/73

इस्लाम में हमारा हिसाब-किताब नहीं चलता है बल्कि अल्लाह का क़ानून चलता है। अल्लाह के क़ानून ने आदम[अ०] के सामने सारे फ़रिश्तों को झुका दिया। हमारा ईमान है कि फ़रिश्तों ने आदम[अ०] को अल्लाह के हुक्म से सजदा किया था और यही वजह है कि सजदे के बाद भी आदम[अ०] अल्लाह नहीं हुए। अगर अल्लाह ने झुका दिया तो आसमान वालों को भी झुकना चाहिए और अगर उसने मना कर दिया तो हम भी नहीं झुकेंगे। इस्लाम में बस अल्लाह का हुक्म चलता है, हमारा हिसाब-किताब नहीं कि यह ऐसा हो सकता था या वैसा हो सकता था। जो हो सकता था उसके बारे में अल्लाह सब से बेहतर जानता है।

अल्लाह के क़ानून को समझने के लिए दो बातों पर ध्यान देना ज़रूरी है। पहली यह कि जब कोई नजफ़ में हज़रत अली[अ०] की ज़ियारत करने उनके रौज़े पर जाता है तो वहाँ ज़ियारत के बाद दो रकअत नमाज़ भी पढ़ता है। इस नमाज़ के बाद एक दुआ भी पढ़ी जाती है जो मफ़ातीहुल जिनान में भी है और इस तरह से है:

ऐ पालने वाले! यह दो रकअत नमाज़ उसके नाम से पढ़ी है जो इस क़ब्र में आराम कर रहा है। ऐ पालने वाले! यह मेरी नमाज़ भी तेरे लिए है, यह रूकू भी तेरे लिए है और यह सजदे भी तेरे लिए हैं। इनके रौज़े में हैं लेकिन यह हैं तेरे लिए।

ऐसा इसलिए है क्योंकि नमाज़ बस तेरे ही लिए पढ़ी जा सकती है और रूकू व सजदे भी बस तेरे ही लिए किए जा सकते हैं। यह तेरा क़ानून है और मैंने तेरे क़ानून पर ही अमल किया है।

यह नमाज़ व दुआ नजफ़ में हज़रत अली[अ०] और करबला में इमाम हुसैन[अ०] दोनों की ज़ियारत में पढ़ी जाती है।

अगर अल्लाह का हुक्म आ जाए तो आदमी क्या है, आसमान के फ़रिश्तों को भी सजदा करना होता है लेकिन अगर अल्लाह कहे कि यहाँ पढ़ो मगर मेरे लिए पढ़ो तो वहीं पढ़ेंगे मगर उसके लिए जो हुक्म देने वाला है।

अब सवाल यह है कि यह दुआ दो जगह क्यों पढ़वाई गई और यह बात दो जगह क्यों कहलवाई गई? यही बात हज़रत

अली[अ०] के रौज़े पर कहलवाई गई और यही बात इमाम हुसैन[अ०] के रौज़े पर। इसकी वजह यह है कि आदमी का कमाल दो तरह से पहचाना जाता हैः या तो उसके फ़ज़ाएल[1] से या मुसीबतों पर उसके सब्र करने से। फ़ज़ाएल की वजह से जिसके कमाल को सब से ज़्यादा पहचाना गया वह हज़रत अली[अ०] हैं और मुसीबतों में जिसके कमाल को सब से ज़्यादा पहचाना गया वह इमाम हुसैन[अ०] हैं। इसीलिए इन दोनों जगहों पर आने के बाद ज़ियारत करने वालों से कहा गया कि कहो कि ऐ पालने वाले! मेरी बन्दगी बस तेरे लिए है ताकि पता चल जाए कि जिसकी क़ब्र की ज़ियारत को आए हो उसी से कुछ सीखा है। इन दोनों इमामों का हाल तो यह है कि एक आया तो उसने ख़ान-ए-काबा में सजदा किया और गया तो मस्जिदे कूफ़ा में सजदा किया। दूसरा आया तो उसने मदीने की मिट्टी पर सजदा किया और जब गया तो करबला की ज़मीन पर सजदा किया। दोनों ही अपने पालने वाले की बड़ाई का एलान कर रहे हैं और दुनिया वालों को अल्लाह की बन्दगी करना सिखा रहे हैं। इसीलिए कहा गया है कि अगर इन से बन्दगी करना सीखा है तो इस तरह से दोहराओ!

बन्दों को बस वही करना है जो अल्लाह कहता है। अगर उसने कहा कि यहाँ यह दुआ पढ़ो तो यहाँ पढ़ना होगी, उसने कहा कि मेरे लिए होगी तो फिर बस उसी के लिए होगी यानी जैसा अल्लाह कहता जाएगा वैसा-वैसा ही बन्दों को करना होगा क्योंकि वह अल्लाह है और बाक़ी सब उसके बन्दे। अल्लाह का क़ानून बस यही है।

किसी ने बड़ी अच्छी बात कही है कि जब अल्लाह ने इन सब को इतना कमाल वाला ही बनाया था कि किसी को अर्शे आज़म पर बुला लिया या किसी को जन्म के वक़्त अपने घर में बुला लिया तो इसी तरह जैसे कल हज़रत आदम[अ०] के लिए सजदा करवाया था वैसे ही दो सजदे अपने आख़िरी रसूल[स०] के लिए भी करा दिए होते। ज़ाहिर सी बात है कि अगर अल्लाह सजदे का हुक्म दे देता तो कोई भी मुसलमान सजदा करने से मना न करता।

---

[1] गुण

लेकिन जवाब देने वाले ने भी बड़ा प्यारा जवाब दिया कि इसमें कमी या कमज़ोरी इनकी नहीं है बल्कि तुम्हारी है क्योंकि हज़रत आदम[अ०] के सामने सब ने सर झुका दिए थे मगर उन्हें कोई एक अल्लाह कहने वाला नहीं मिला। इधर का हाल दूसरा है क्योंकि यहाँ तो अल्लाह ने किसी के लिए सजदे का हुक्म भी नहीं दिया है फिर भी छोटी ही सही मगर एक क़ौम ऐसी पैदा हो गई जो इन्हें अल्लाह मान बैठी है। अगर कहीं इनके लिए सजदे का हुक्म भी आ गया होता तो दुनिया का नक़्शा ही कुछ और होता।

बस यही है अल्लाह की बन्दगी और यही है उसकी इबादत। जो जितना बड़ा अल्लाह का बन्दा होगा अल्लाह के यहाँ उसका दर्जा उतना ही ऊँचा होगा।

(6)

अल्लाह की हुकूमत

क़ुरआने करीम ने बार-बार इस सच्चाई की तरफ़ ध्यान दिलाया है कि यह सारी दुनिया और यह सारा मुल्क अल्लाह का है। वही हर चीज़ का मालिक है और उसके मालिक होने में कोई उसका साथी नहीं है। अगर इस दुनिया को देखा जाए तो सारा मुल्क उसके हाथ में हैः

बरकतों वाला है वह जिसके हाथों में सारा मुल्क है।[1]

इस दुनिया के बाहर दूसरी दुनिया यानी क़यामत की दुनिया को देखिए तो वहाँ भी उसी की हुकूमत हैः

बताओ! आज के दिन मुल्क किसके हाथ में है ?[2]

इसके बाद एक आवाज़ आएगीः

अल्लाह का है जो जो इस मुल्क का मालिक भी है और जिसपर इसका पूरा कंट्रोल भी है।

---

[1] सूरए मुल्क/1
[2] सूरए ग़ाफ़िर/16

अपनी बोल-चाल में हम अल्लाह को भी मालिक कहते हैं और एक-दूसरे को भी मालिक कहते हैं लेकिन हमारे और उसके मालिक होने में फ़र्क़ है। हमारे मालिक होने का मतलब अलग है और उसके मालिक होने का मतलब अलग है।

असल में मालिक दो तरह से हुआ जाता हैः एक असली मालिक होना जहाँ मालिक को अपनी चीज़ पर पूरा-पूरा कंट्रोल होता है कि वह जैसे चाहे इस्तेमाल करे क्योंकि चीज़ ही उसकी है। दूसरे क़ानूनी मालिक होना जहाँ मालिक को यूँ तो अपनी चीज़ पर कोई कंट्रोल नहीं होता लेकिन क़ानून उसे कंट्रोल दे देता है और इसीलिए उसे उस चीज़ का मालिक कहा जाता है। वरना असलियत में वह उस चीज़ का मालिक नहीं होता है। जैसे अगर कोई बाज़ार से रूमाल ख़रीदने जाए तो क़ानून यह है कि ख़रीदने से पहले बेचने वाला उस रूमाल का मालिक होता है मगर जब ख़रीदने वाले ने उसकी क़ीमत दे दी तो अब वह बेचने वाला का नहीं होता बल्कि ख़रीदने वाले का हो जाता है यानी बेचने और ख़रीदने के बाद मालिक बदल जाता है। पहले मालिक कोई और होता है मगर बाद में मालिक कोई और हो जाता है।

किसी भी चीज़ को ख़रीदने और बेचने से उस चीज़ का मालिक तो बदल जाता है मगर उस चीज़ की मिल्कियत वैसी की वैसी ही रहती है जिसमें कोई बदलाव नहीं होता। यानी अगर रूमाल ख़रीदने वाला रूमाल से कहे कि मुझे अभी तेरी ज़रूरत नहीं है बल्कि मुझे तो अभी पैसों की ज़रूरत है इसलिए तू नोट बन जा तो वह चाहे जितनी बार अपनी इस बात को दोहरा ले मगर रूमाल में कोई बदलाव नहीं आएगा। इसका मतलब यह है कि हम मालिक तो कहे जाते हैं मगर हमारे हाथ में कोई कंट्रोल नहीं है।

इसीलिए क़ुरआन ने दुनिया के मालिकों से कहा हैः

देखो! ज़मीन पर अकड़ कर मत चलना।[1]

जब लोगों में अपनी दौलत, अपनी इज़्ज़त, अपनी पोस्ट या किसी भी वजह से घमंड आ जाता है तो ज़मीन पर उनके चलने

---

[1] सूरए लुक़मान/18

के दो ही तरीक़े होते हैंः या तो यूँ चलते हैं जैसे घोड़ों की टापों की आवाज़ आ रही हो या यूँ सर उठाकर चलते हैं कि दूर से ही उनका सर दिखाई दे जाए। इसलिए क़ुरआन ने आदमी को फिर समझाया कि ऐ आदम की औलाद! होश में आ जाओ! ज़मीन पर अकड़ कर मत चलो क्योंकि तुम इन दोनों में से कोई काम नहीं कर सकते, न तुम ज़मीन को अपनी ठोकर से चीर सकते हो और न ही सर उठाकर पहाड़ों के बराबर हो सकते हो। तुम्हें हम ने सब से अच्छा बनाया है। यह पहाड़ तो सुन-समझ भी नहीं सकते मगर फिर भी तुम इनके बराबर नहीं हो सकते। यहाँ बैठे-बैठे ऊँचा होना तो दूर की बात है तुम तो वहाँ जाकर भी ऊँचे नहीं हो सकते बल्कि कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि जब कोई घमंडी किसी पहाड़ की आड़ लेता है तो उसकी वजह से पहाड़ भी पानी में डूब जाता है। हज़रत नूह[अ०] के वक़्त में इतना बड़ा सैलाब और तूफ़ान आया था कि सारी दुनिया डूब रही थी। हज़रत नूह[अ०] ने अपने बेटे को आवाज़ भी दी थी कि बेटा! आ जाओ। हमारे साथ हमारी कश्ती पर सवार हो जाओ क्योंकि आज अल्लाह के हुक्म से कोई भी बचने वाला नहीं है मगर उसने कहा कि नहीं! मैं पहाड़ पर जा रहा हूँ। पहाड़ मुझे बचा लेगा। शायद वह पहाड़ डूबने से बच जाता लेकिन जब अल्लाह के अज़ाब का पानी वहाँ चला जाए कि उसे भी डुबोना है जो पहाड़ पर गया है तो नतीजा यही होगा कि पहाड़ भी डूब जाएगा। जो पहाड़ उसे बचाने वाला था उसी ने उसे डुबो दिया। जब आदमी इतनी ऊँचाई भी नहीं पा सकता तो फिर किस बात पर अकड़ता है।

हदीसों में है कि जब कोई आदमी ज़मीन पर अकड़ कर चलता है तो ज़मीन अपनी ज़बान में उससे कहती है कि कुछ दिन और ठहर जाओ, ठोकर मार लो झेल लूँगी, जो करना हो कर लो लेकिन जिस दिन तुम मेरी गोद में आओगे उस दिन बस मेरे क़ब्ज़े में होगे। उस दिन तुम्हें ऐसे पीसूँगी कि तुम्हारा निशान भी नहीं मिलेगा।

अगर आदमी दस, बीस-पचास एकड़ का भी मालिक हो तो क़ानून में लिखा होता है कि यह आदमी इतनी ज़मीन का मालिक

है और इतनी ज़मीन इसकी है मगर जैसे ही वह मरने के बाद ज़मीन में दफ़न किया जाता है तो सब कुछ मिट जाता है। अब अगर कोई दस साल के बाद देखना भी चाहे कि आओ! देखें कि वह इतने एकड़ के मालिक थे, अब उनका क्या हाल है तो ज़मीन के अंदर उस आदमी का अता-पता भी नहीं मिलता। कहाँ चला गया? कहीं उसका नाम-निशान भी नहीं है। अपनी चीज़ के साथ मालिक जो चाहे करे और जैसा चाहे करे मगर किसी भी चीज़ को यह अधिकार नहीं है कि वह अपने मालिक को हाथ भी लगा दे। फिर यह क्या हुआ और वह कहाँ है जिसे ज़मीन के अंदर दफ़नाया गया था जबकि वह इतनी सारी ज़मीन के मालिक थे?

बात यह है कि उसे ज़मीन का मालिक बस क़ानून ने बनाया था वरना असलियत में वह ज़मीन का मालिक था ही नहीं। अगर असलियत में ज़मीन का मालिक होता तो चाहे सौ साल बीत जाते, ज़मीन की क्या मजाल थी कि जो अपने मालिक को हाथ भी लगा पाती। इसलिए आदमी का मिट्टी में मिल जाना इस बात की निशानी है कि वह ज़मीन का बस क़ानूनी मालिक है वरना उसे अपनी चीज़ पर कोई कंट्रोल नहीं है। इसीलिए जब अल्लाह ने अपने मालिक होने का एलान किया तो साफ़-साफ़ कह दिया कि अल्लाह सिर्फ़ मालिक ही नहीं है बल्कि हर चीज़ पर उसका पूरा-पूरा कंट्रोल भी है:

> बरकत वाला है जो सारे मुल्क का मालिक है और वह हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है।[1]

जब तक चाहेगा मिट्टी को मिट्टी रखेगा, जब तक चाहेगा पानी को पानी रखेगा, जब तक चाहेगा आग को आग रखेगा, जब तक चाहेगा हवा को हवा बनाकर रखेगा, जब तक चाहेगा ज़मीन को ज़मीन और आसमान को आसमान रखेगा और जब चाहेगा सारे सिस्टम को उलट देगा:

> उस दिन जब ज़मीन दूसरी ज़मीन में बदल जाएगी और आसमान भी बदल दिए जाएंगे।[2]

---

[1] सूरए मुल्क/1
[2] सूरए इब्राहीम/48

उस दिन समझ में आएगा कि मालिक किसे कहते हैं। जब सारी दुनिया का नक़्शा बदल जाएगा तब समझ में आएगा कि मालिक कौन होता है।

इसलिए पहली बात तो यह है कि इस दुनिया में जितनी भी मिल्कियत (मालिक होना) पाई जाती है वह सब क़ानूनी बातें हैं जिनकी वजह से लोग मालिक बने हुए हैं वरना असलियत में मालिक कोई भी नहीं है। क़ानून जिसको चाहे जितना आगे बढ़ा दे और यही क़ानून जब चाहे आदमी को खींचकर उसकी औक़ात दिखा दे। यह तो क़ानून के खेल-तमाशे होते हैं वरना इनकी असलियत कुछ भी नहीं है। आज हुकूमत ने एक काग़ज़ को हज़ार का नोट कह दिया तो वह हज़ार का नोट बन गया और अगर क़ानून इसी हज़ार के नोट को वापस ले ले तो इस नोट को कोई दो रूपए में भी ख़रीदने पर तैयार नहीं होगा। सादा काग़ज़ लिया जाए तो कम से कम उसके ऊपर कुछ लिखा तो जा सकता है मगर यह हज़ार का नोट तो इस काम का भी नहीं है कि इसके ऊपर कुछ लिखा जा सके। क़ानून ने इतना ऊँचा बना दिया था और इसी क़ानून ने खींचकर नीचे फेंक दिया। यह काग़ज़ पहले भी काग़ज़ था और अब भी काग़ज़ ही है। जो पहले था वही अब भी है लेकिन पहले कुछ था मगर अब कुछ और है।

इसी तरह अगर कोई आम आदमी सड़क पर टहल रहा हो तो कोई उसे सलाम तक भी नहीं करता मगर जैसे ही क़ानून ने उसे कोई पोस्ट दे दी तो अब वही आदमी जिस सड़क से भी जाता है लोग उसे सलाम करने के लिए लाइन लगाए खड़े रहते हैं और अगर वही आदमी इलेक्शन में हार जाए तो अब उसे ढूँढना पड़ता है कि कोई सलाम करने वाला मिल जाए बल्कि अब तो कोई उसका सलाम लेने के लिए भी तैयार नहीं होता। यह सब क़ानून के तमाशे हैं। इनकी असलियत कुछ भी नहीं है। जो इन सारी बातों को असलियत समझ बैठे वह धोखा खाया हुआ आदमी है वरना इस दुनिया की असलियत है ही क्या। यह तो इस दुनिया का एक खेल है जो चल रहा है और हर आदमी इस

पर ख़ुश भी हो रहा है। असलियत बस यही है कि किसी के भी पास कुछ नहीं है।

इसके उलट जब अल्लाह अपने आप को मालिक कहता है तो इसका मतलब यह होता है कि ज़मीन से लेकर आसमान तक हर चीज़ उसके कंट्रोल में है। अल्लाह को किसी क़ानून ने मालिक नहीं बनाया है बल्कि वह तो ख़ुद ही क़ानून बनाने वाला है।

इस तरह दुनिया वालों के मालिक होने और अल्लाह के मालिक होने में पहला फ़र्क़ यह है कि यहाँ सब क़ानून के बनाए हुए मालिक हैं मगर अल्लाह असली मालिक है और हर चीज़ बस उसी के हाथ में है। वह ताक़त वाला भी है और क़ुदरत वाला भी। उसे किसी क़ानून ने मालिक नहीं बनाया है।

दूसरी बात यह है कि क़ुरआन में लिखा हुआ हैः

उसके हाथ में मुल्क है।[1]

सवाल यह है कि यह कौन सा मुल्क है? आज के ज़माने में दो ही चीज़ें ऐसी हैं जिनकी गिनती बताना कठिन है। लोगों की गिनती के बारे में तो पहले भी कहा जाता रहा है कि किसी मुल्क में बसने वाले लोगों की सही गिनती बताई ही नहीं जा सकती और बात भी ठीक है क्योंकि अगर हुकूमत अपना सारी ताक़त लगा भी दे तब भी नहीं बता पाएगी क्योंकि यह काम एक-दो दिन का नहीं है। छोटे से छोटा मुल्क जहाँ दो-दो लाख की आबादी है अगर वहाँ की आबादी को भी गिनना शुरू किया जाए और यह मान लिया जाए कि एक मिनट के अंदर ही अंदर सारे मुल्क की आबादी को गिन लिया जाएगा तो यह काम कभी नहीं हो सकता क्योंकि एक मिनट के घटते-बढ़ते ही आबादी भी घट-बढ़ जाएगी। मान लीजिए कि एक मिनट पहले गिना था कि मुल्क में रहने वाले दस लाख आदमी हैं और अगले ही पल पता चला कि एक आदमी चल बसा या दो बच्चे पैदा हो गए जिससे सारा हिसाब ग़लत हो जाएगा। सही आबादी गिनने का काम कभी हो ही नहीं सकता। यह बात तो पुरानी हो गई। हर ज़माने में यही कहा जाता रहा है कि दुनिया की सही आबादी बताई ही

[1] सूरए मुल्क/1

नहीं जा सकती। जब तक कि कोई ऐसा गिनने वाला न पैदा हो जाए जिसकी आँखों के सामने सारी दुनिया हो और अगर ऐसा हो जाए तो फिर ऐसे गिनने वाले की ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी क्योंकि वह तो पहले से ही जानता होगा। इसलिए अगर हम दुनिया की सही आबादी को गिनना चाहें तो कभी नहीं गिन सकते लेकिन आज दो नई बातें और हो गई हैं जिनका गिनना और हिसाब लगाना भी बड़ा कठिन लगता है। इन में से एक है फ़ैशन। बहुत से लोग कहते हैं कि आज-कल यह फ़ैशन चल रहा है। अब कोई इन से पूछे कि इस आज-कल का मतलब क्या होता है?

एक साहब दुकान पर गए और उस दुकान से अपनी बीवी के लिए कपड़ा ख़रीदा। जैसे ही कपड़ा लिया वैसे ही लेकर भाग खड़े हुए। दुकानदार समझा कि चुराकर भाग रहे हैं। उसने उनका पीछा किया। आगे-आगे वह और पीछे-पीछे वह दुकानदार। यहाँ तक कि वह अपने घर के दरवाज़े पर पहुँच गए। वह भी दरवाज़े पर जाकर खड़ा हो गया और बोला कि आपको शर्म नहीं आती? आप कपड़ा भी ले आए और पैसे भी नहीं दिए। उन्होंने कहा कि क्या मैं आपको चोर लगता हूँ? उसने कहा कि अगर चोर नहीं हैं तो पैसे देकर आते। वह बोले कि डर यह था कि जितनी देर में पैसे का हिसाब होगा उतनी देर में कहीं फ़ैशन न बदल जाए।

लोगों पर कब कौन सा पागलपन सवार हो जाए कोई नहीं जानता। दीवाने तो वह हैं जो इस फ़ैशन के पीछे मर रहे हैं जिसका कोई भरोसा ही नहीं है। सच्ची बात तो यह है कि आज आदमी खिलौना बनकर रह गया है। जितने बड़ी ताक़त और पैसे वाले हैं वह दिन-रात इस खिलौने से खेलते रहते हैं। सुबह में पता चलता है कि आज यह फ़ैशन है तो सब उसके पीछे दौड़ पड़ते हैं और शाम में पता चला कि फ़ैशन बदल गया है क्योंकि उन्हें तो अपना माल बेचना था। किसी ने सही बात कही है कि अगर लोग बेवक़ूफ़ बनने के लिए तैयार हों और कोई उन्हें बेवक़ूफ़ न बनाए तो बेवक़ूफ़ न बनाने वाला ही बेवक़ूफ़ है। आज आदमी की अक़्ल और उसकी समझ को खिलौना बना

लिया गया है। दिमाग़ों को तमाशा बना लिया गया है और हर आदमी उसी के पीछे दौड़ रहा है।

इस मामले में औरतें मर्दों से भी आगे रहती हैं। उन्हें बस बता दीजिए कि यह फ़ैशन चल रहा है, फिर तो वह यह भी नहीं सोचतीं कि यह काम अच्छा है या बुरा, हमें करना भी चाहिए या नहीं, हमारे कल्चर से मेल भी खाता है या नहीं? बस फ़ैशन है इसलिए होना चाहिए वरना लोग क्या कहेंगे। कभी यह भी सोचना चाहिए कि अल्लाह क्या कहेगा? कभी यह भी सोचना चाहिए कि हमारा रसूल क्या कहेगा? कभी यह भी सोचना चाहिए कि ग़ैबत के पर्दे में बैठा इमाम क्या कहेगा? लकिन हर पल बस यही दिमाग़ में चलता रहता है कि लोग क्या कहेंगे? कहने वाले तो मरकर चले जाएंगे। मरने के बाद सामना इनका नहीं होगा बल्कि सारी दुनिया के पालने वाले का होगा।

पहली बात फ़ैशन की है जिसके बारे में यह तय करना कठिन है कि किस वक़्त सही क्या है और आज-कल क्या चल रहा है। यही मामला अब आज के वक़्त में मुल्कों का हो गया है। पहले तो लोगों की गिनती करना कठिन काम था और अब मुल्कों की गिनती भी कठिन हो गई है। आज हिसाब लगाया तो पता चला कि दुनिया में इतने मुल्क हैं और सुबह-सुबह होते-होते ख़बर आई कि उस मुल्क में बग़ावत हो गई है और उसके दो टुकड़े हो गए हैं। एक मुल्क और बढ़ गया। कभी बढ़ जाता है और कभी कोई मुल्क घट भी जाता है। बहरहाल दुनिया में यह सारे मुल्क पाए जाते हैं। हर मुल्क का कोई न कोई मालिक भी होता है जो वहाँ हुकूमत कर रहा होता है लेकिन इतनी बड़ी दुनिया में सौ-डेढ़ सौ या दो सौ जितने भी मुल्क हैं या जितने बनने वाले हैं इन सारे मुल्कों की पहचान क्या है?

आपका मुल्क, हमारा मुल्क, इनका मुल्क, उनका मुल्क, सारे मुल्क। इन मुल्कों की पहचान क्या है? जब भी किसी मुल्क को पहचानना होता है तो उसे उसकी सीमाओं से पहचाना जाता है। वह मुल्क कितना बड़ा है? कहा कि उसके पूरब में वह मुल्क है, पश्चिम में वह मुल्क है, उत्तर में वह मुल्क है और उसके दक्षिण में वह मुल्क है। जब किसी मुल्क की यह चारों सीमाएं पता चल

जाती हैं तो यह भी पता चल जाता है कि वह मुल्क कितना बड़ा है। यानी हर मुल्क को पहचानने का बस एक ही रास्ता है कि उसकी चारों सीमाएं पता चल जाएं। जब तक यह चारों सीमाएं नहीं पता चलेंगी तब तक सही मुल्क पता ही नहीं चल सकता।

अब आइए! अल्लाह से पूछते हैं कि वह किस मुल्क का मालिक है। इस बारे में क़ुरआन ने साफ़ एलान कर दिया हैः

बरकत वाला है वह जिसके हाथों में सारा मुल्क है।[1]

अब मुल्क तो बहुत सारे हैं। अल्लाह कौन से मुल्क का मालिक है? उसके हाथ में कौन सा मुल्क है? मुल्क तो इतने हैं कि किस-किस का नाम लिया जाए, पूरब वाला उसका मुल्क है या पश्चिम वाला, उत्तर वाला उसका मुल्क है या दक्षिण वाला?

बात यह है कि सीमाएं तय करके जो मुल्क बनाया जाता है वह बन्दों का मुल्क होता है और सारी सीमाओं को तोड़कर जो मुल्क बनेगा बस वही अल्लाह का मुल्क होगा। अल्लाह के मुल्क के लिए यह नहीं कहा जा सकता कि पूरब वाला या पश्चिम वाला, उत्तर वाला या दक्षिण वाला।

इसीलिए अल्लाह ने क़ुरआन में यह बात भी साफ़ कर दी हैः

पूरब भी अल्लाह के लिए है और पश्चिम भी।[2]

भला अल्लाह के बारे में कौन कहेगा कि पूरब क्या है और पश्चिम क्या है क्योंकि पूरब भी उसी का है और पश्चिम भी। इससे पता यह चलता है कि सबके मुल्कों की सीमाएं तो तय हो सकती हैं चाहे क़ानूनी हों या असली मगर अल्लाह के मुल्क की कोई सीमा नहीं है।

इसलिए जब भी अल्लाह के मुल्क में कोई क़ानून लागू हो तो सीमाएं नहीं ढूँढना चाहिएं कि कहाँ लागू हो और कहाँ लागू न हो। यही वजह है कि जब अल्लाह ने अपने मुल्क के लिए क़ानून बनाया तो वह क़ानून न ज़मीन का था और न आसमान का, न आदमियों का और न जिन्नातों का और न फ़रिश्तों का बल्कि सब के लिए था क्योंकि सब के सब उसी के मुल्क में हैं।

---

[1] सूरए मुल्क/1
[2] सूरए बक़रा/115

सबका मुल्क वह है जिसमें क़ानून तो है लेकिन किसी का कंट्रोल किसी भी चीज़ पर नहीं है। सबका मुल्क वह है जिसकी सीमाएं तय हैं लेकिन अल्लाह का मुल्क वह है जिसकी कोई सीमा नहीं है क्योंकि वह सारी दुनिया का मालिक है।

अब यहाँ से यह बात समझ में आ जाती है कि अल्लाह की तौहीद का मतलब यह है कि उसे ही सारी दुनिया का मालिक माना जाए यानी सारी दुनिया उसकी है और सब कुछ बस उसी के हाथ में है। यहाँ तक कि उसी के हाथ में ज़िन्दगी और मौत भी हैः

उसी ने ज़िन्दगी और मौत को पैदा किया है।[1]

ज़िन्दगी और मौत भी उसी के हाथ में है। यानी सारी दुनिया उसी की है। वह सारी दुनिया का मालिक है और असली मालिक है।

अल्लाह जो सारी दुनिया का मालिक है वह अपने रसूल[स०] से कहता है कि जब मुझ से दुआ मांगना तो ऐसे दुआ मांगिएगाः

ऐ मेरे रसूल! कहिए कि ऐ अल्लाह! तू सारी दुनिया का मालिक है, तू जिसको चाहता है मुल्क[2] देता है।[3]

जब हम यह कहते हैं कि तू मुल्क वाला है और जिसको चाहता है मुल्क देता है तो इससे यह भी पता चल जाता है कि वह क़ानून से बनने वाला अल्लाह नहीं है क्योंकि वह सिरे से क़ानून वाले मुल्क का मालिक ही नहीं है बल्कि वह असली अल्लाह है और असली मुल्क का मालिक है। इसीलिए जिसको चाहेगा देगा और जिससे चाहेगा ले लेगा।

जब बन्दा मुल्क के अल्लाह से दुआ मांगेगा और वह अल्लाह अपने बन्दे को देगा तो उसका दिया हुआ मुल्क क़ानून का खेल-तमाशा नहीं होगा बल्कि यह मुल्क ऐसा होगा जिसमें बन्दे को पूरा कंट्रोल होगा यानी इतना कंट्रोल होगा कि अगर ज़मीन का कंट्रोल दिया है तो जब तक चाहेगा मिट्टी रहेगी और जब

---

[1] सूरए आले इमरान/26
[2] ताक़त, क़ुदरत, हुकूमत या कंट्रोल
[3] सूरए आले इमरान/26

मालिक के दिए हुए कंट्रोल से चाहेगा तो वही मिट्टी सोना बन जाएगी, जब तक चाहेगा पानी, पानी रहेगा और जब चाहेगा हाथ का धोवन हीरे-मोती बन जाएगा, जब तक चाहेगा आग, आग रहेगी और जब चाहेगा आग फूल बन जाएगी। जब तक चाहेगा पानी बरसता रहेगा और जब चाहेगा बारिश थम जाएगी। जब तक चाहेगा चाँद एक रहेगा और जब चाहेगा चाँद दो टुकड़े हो जाएगा। जब तक चाहेगा सूरज पश्चिम में डूबेगा और जब चाहेगा निकल आएगा।

अल्लाह के मुक़ाबले में कोई मालिक नहीं है। आदमी तो अपना मालिक भी नहीं है, भला इस दुनिया का मालिक कैसे होगा? उसे अपने ही ऊपर कंट्रोल नहीं है, दुनिया उसके हाथ में कैसे होगी? अल्लाह जिसको कंट्रोल देगा बस उसी के हाथ में कंट्रोल होगा और जितना कंट्रोल देगा वह बस उतने कंट्रोल का ही मालिक होगा। उसने जितना हमें कंट्रोल दिया है हम बस उतने के ही मालिक हैं। अगर उसने हमें कुछ न बनाया होता तो न कहीं सवाब का पता होता और न अज़ाब[1] का।

अल्लाह ने हमें चलने-फिरने, खाने-पीने और उठने-बैठने का कंट्रोल दिया है और इसीलिए तो वह हम से हिसाब लेता है कि जो कंट्रोल दिया था उसे किन कामों में लगाया? हम ने जो ताक़त दी थी वह कहाँ-कहाँ लगाई?

उसने सब को दिया है लेकिन यह भी सामने की बात है कि सब को बराबर से भी नहीं दिया जा सकता क्योंकि अगर देने वाला समझदार है तो वह सब को बराबर से दे ही नहीं सकता, चाहे वह कितना ही बड़ा देने वाला क्यों न हो।

हम हज़ार दिरहम लेकर अपने घर से निकले कि अल्लाह के नाम पर लोगों में बांट देंगे। जैसे ही घर से निकले वैसे ही एक मांगने वाला मिल गया। हमारी जेब में हज़ार दिरहम हैं तो क्या हम सारे के सारे पैसे उठाकर उसी को दे देंगे कि चलो काम ख़त्म हुआ। पैसा देखकर न करने वाला कोई नहीं होता इसलिए मांगने वाले को देखकर पहले उसके हालात को देखते हैं और फिर कहते हैं कि इसके लिए तो सौ दिरहम ही बहुत हैं बल्कि

---

[1] प्रकोप

अगर हम ने सौ दिरहम दे भी दिए और किसी ने देख लिया तो वह टोक भी देगा कि अरे! उस बेचारे को तो अगर दस दिरहम भी दे दिए होते तो उसका काम चल जाता। न जाने कितने ऐसे लोग हैं जो हाथ फैलाकर नहीं मांगते हैं, उनको दे दीजिए तो कोई सवाब भी होगा, इस तरह के लोगों को देने से क्या फ़ाएदा ?

दूसरा आदमी हमारे सामने आया मगर उसने अपना हाथ नहीं फैलाया लेकिन उसके बारे में हम जानते थे कि उसके हालात कैसे हैं। हम ने उसे उठाकर पाँच सौ दिरहम दे दिए। अब अगर कोई कहे कि पहले वाले ने मांगा तो उसे सौ दिरहम दिए और इन्होंने तो आपके सामने हाथ भी नहीं फैलाया फिर भी इन्हें पाँच सौ दिरहम क्यों दे दिए ? हम ने कहा कि अगर हमारे अंदर घमंड होता तो इस बात का इन्तेज़ार करते कि वह अपना हाथ फैलाए तो हम दें मगर हम घमंडी नहीं हैं, नासमझ भी नहीं है और हम जानते हैं कि उसके हालात कैसे हैं, इसलिए 500 दिरहम दे दिए।

बहरहाल बांटने वाला तो बांट रहा है लेकिन यह भी देखना होगा कि लेने वाले के हाथ में ताक़त कितनी है या लेने वाले की जेब में जगह कितनी है क्योंकि अगर इस बात का ध्यान नहीं रखा गया तो न जाने वह कौन से रास्ते पर चला जाए या न जाने कहाँ भटक जाए। किसे देना है या किसे नहीं देना है, यह तो देने वाले का अपना कमाल होता है। यही वजह है कि कुछ ज़िन्दगी भर मांगते रहते हैं और फिर भी यही शिकायत करते रहते हैं कि मांगते हैं लेकिन अल्लाह देता ही नहीं है। कुछ ऐसे भी हैं कि अगर वह अल्लाह से कह दें तो मालिक उनकी बात की लाज रखने के लिए पहाड़ को भी उसकी जगह से हटा देगा क्योंकि मालिक से बेहतर अपने बन्दे को भला कौन जानता है ?

इस तरह अगर अल्लाह किसी को कंट्रोल देता है यानी जिसे असली मुल्क देता है तो ख़ाली क़ानून की किताबों में नहीं लिखा जाता कि यह उस जगह के मालिक हो गए बल्कि इसके उलट अल्लाह असलियत में अपने बन्दे को इख़्तियार वाला (कंट्रोल वाला) बनाता है और ऐसा बस अल्लाह ही कर सकता है क्योंकि

वह जिसको चाहता है देता है और जिससे चाहता है ले लेता है। यानी जो थोड़ा बहुत इख़्तियार (कंट्रोल) है वह भी नहीं रह पाता।

जब हज़रत मूसा[अ०] फ़िरऔन के पास आए थे तो उन्होंने यही कहा था कि ऐ फ़िरऔन! मैं अल्लाह का भेजा हुआ हूँ। मैं अपने मालिक का मैसेज लेकर आया हूँ। मैं जिसको अल्लाह मानता हूँ तू भी उसे अल्लाह मान ले। लेकिन फ़िरऔन ने हज़रत मूसा[अ०] की हालत देखी तो अपने दरबारियों को देखकर मुस्कुराया क्योंकि हज़रत मूसा[अ०] तो जैसे थे वैसे ही उठकर चले आए थे यानी उनका पहनावा और रहन-सहन बहुत सीधा-सादा था।

फ़िरऔन ने हज़रत मूसा[अ०] से कहा कि आप जानते भी हैं कि मेरे पैरों के नीचे नहरें बहती हैं। फिर भी आप मुझ से बात करने और अल्लाह का कलमा पढ़वाने के लिए आए हैं?

फ़िरऔन ने हज़रत मूसा[अ०] से यह नहीं कहा था कि मैं तो ख़ुद ही सब का अल्लाह हूँ, आप किस अल्लाह का मैसेज लेकर आए हैं? बल्कि उसने अपने लोगों को समझाने के लिए कहा कि यह मूसा[अ०] मुझ से अपनी बात मनवाने के लिए आए हैं। यह बेचारे मुझे पहचानते नहीं हैं। मेरे पास इतना कंट्रोल है कि मेरे पैरों में नहरे बह रही हैं यानी जहाँ मेरा महल बना हुआ है उसके नीचे नहरे हैं।

सवाल यह है कि उसने ताक़त दिखाने और अपने मालिक होने को साबित करने के लिए बहती हुई नहरों की बात क्यों कही? न उसने अपने सरकारी ख़ज़ाने की बात कही, न अपनी फ़ौज की बात कही और न माल-दौलत का नाम लिया बल्कि उसने बस यह कहा कि मेरे पैरों के नीचे नहरे बह रही हैं।

वजह यह है कि जब फ़िरऔन ने अपने मालिक होने को साबित करने के लिए पानी का सहारा लिया तो अल्लाह ने भी कहा कि जिस पानी के बल पर यह अपना मालिक होना साबित करना चाहता है उसी पानी के रास्ते इसे समझाया जाए कि मालिक होना किसे कहते हैं और इसीलिए जैसे ही हज़रत मूसा[अ०] का पीछा करते-करते दरिया के बीच में आया वैसे ही डूब गया और ऐसा अल्लाह ने इसलिए किया था ताकि उसे पता चल जाए

कि अल्लाह देना भी जानता है और लेना भी जानता है। साथ ही दुनिया ने दोनों चीज़ें एक साथ देख भी लीं कि जो अल्लाह बना था वह डूब गया और जो अल्लाह का बन्दा था वह अपने सारे साथियों को लेकर दरिया के उस पार निकल रहा था।

अल्लाह की तौहीद कहती है कि सारी दुनिया एक मुल्क है और इस मुल्क का मालिक बस अल्लाह है। इसलिए सारी दुनिया का मालिक बस उसी को माना जाए और अगर न माना जाए तो शिर्क हो जाएगा, तौहीद नहीं बचेगी।

ठीक है कि वह सारी दुनिया का मालिक है लेकिन हम ने सारी दुनिया में मुल्कों से लेकर गाँवों तक हर जगह यही देखा है कि जिस जगह का कंट्रोल जिसके हाथ में होता है वहाँ उसका एक आफ़िस भी होता है और वह वहाँ का आफ़िसर होता है। जैसे अगर कोई किसी कारख़ाने का मालिक है तो उस कारख़ाने में लेबर से लेकर इंजीनियर तक हर आदमी को वही रखता है और कारख़ाने पर पूरा कंट्रोल भी उसकी का होता है। मान लीजिए कि हम किसी कारख़ाने के मालिक हैं। इसलिए उस कारख़ाने में लेबर से लेकर इंजीनियर तक हर आदमी को भी हम ही रखेंगे और कारख़ाने पर पूरा कंट्रोल भी हमारा ही होगा। अचानक कारख़ाने में काम करने वाले कुछ लोग किसी एक आदमी को लेकर हमारे पास आ जाएं जिसे हम जानता ही न हों और फिर यह भी कहें कि जी हाँ! आप इन्हें नहीं पहचानते हैं लेकिन यह आपके कारख़ाने के मैनेजर हैं। हम लोगों ने मीटिंग करके इन्हें आपके कारख़ाने का मैनेजर बना दिया है। जब कारख़ाना हमारा है तो दूसरे कैसे किसी को मैनेजर बना सकते हैं? इसका मतलब यह है कि वह लोग हमारे कारख़ाने को हथियाना चाहते हैं और कोई साज़िश रची जा रही है वरना सामने की बात है कि जब कारख़ाना हमारा है तो चपरासी से लेकर मैनेजर तक सब को हम ही रखेंगे।

अगर कोई किसी गाँव का प्रधान है तो शुरू से लेकर आख़िर तक सब कुछ वही तय करेगा। जिसके पास जहाँ का कंट्रोल होता है वहाँ के छोटे से लेकर बड़े तक हर आदमी को वही रखता या निकालता है।

अब समझ में यह नहीं आता कि अल्लाह को सारी दुनिया का मालिक किस मायनी में माना जाता है क्योंकि अगर यह मुल्क अल्लाह का बनाया हुआ है तो इस मुल्क में हर पोस्ट पर रखने वाला अल्लाह ही को होना चाहिए। यही वजह है कि जिन्होंने इसे अल्लाह का मुल्क माना है उन्होंने हज़रत आदम[अ०] को भी माना है क्योंकि आदम[अ०] को अल्लाह ने ही चुना था। उन्होंने हज़रत नूह[अ०] को भी माना है क्योंकि उन्हें भी अल्लाह ने ही नबी बनाया था। हज़रत इब्राहीम[अ०] को माना है क्योंकि वह भी अल्लाह के ही भेजे हुए नबी थे। हज़रत ईसा[अ०] को माना है क्योंकि वह भी अल्लाह के ही चुने हुए थे और फिर आख़िर में उसके आख़िरी रसूल हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] को भी माना है और इतना ही नहीं बल्कि हम जब भी किसी को मानेंगे तो बस ऐसे ही को मानेंगे जिसको वह बनाएगा।

मुल्क बस अल्लाह का है और इसीलिए वह जिसको भी बनाएगा बस वही साहिबे इख़्तियार होगा यानी बस उसी के हाथों में कंट्रोल होगा। इसीलिए जब अपने आख़िरी रसूल से कहा तो यह नहीं कहा कि आप किसी को इमाम बना दीजिए बल्कि यह कहाः

> ऐ रसूल! वह हुक्म पहुँचा दीजिए जो आपको दिया जा चुका है।[1]

यानी जिसे इमाम बनाने का हुक्म हमने दिया है अब उसके इमाम बनने का एलान सब के सामने कर दीजिए क्योंकि इमाम बस अल्लाह ही बना सकता है। आपको हम ने रसूल बनाया है तो आप भी बस उसी को इमाम बनाएंगे जिसके लिए हम कहेंगे।

कभी किसी नबी या रसूल ने अल्लाह की ख़ुदाई के कारख़ाने में घुसने की कोशिश नहीं की क्योंकि मुल्क बस अल्लाह का है और वही सारी दुनिया का मालिक है। वह जिसको चाहेगा मुल्क देगा और जिससे जब चाहेगा ले लेगा, जिसको चाहेगा इज़्ज़त देगा और जिसको चाहेगा नीचा दिखाएगा। जब वह मुल्क देता है तो इज़्ज़त भी देता है और जब वह मुल्क ले लेता है तो इज़्ज़त

---

[1] सूरए माएदा/67

भी नहीं बचती। उसने अपने दरिया में फ़िरऔन को इसीलिए डुबोया था ताकि वह इज़्ज़त से मर भी न सके। अपनी ज़मीन में क़ारून को इसीलिए धंसाया था ताकि उसे इज़्ज़त के साथ मौत भी न आए। तभी तो ऐसा है कि जिससे वह मुल्क ले लेता है उसके पास इज़्ज़त भी नहीं बचती।

आज भी ऐसा ही है। सारी दुनिया में अल्लाह का दिया हुआ मुल्क इमाम हुसैन[अ०] के पास था या यज़ीद के पास? लाखों-करोड़ों लोगों की ज़बान पर इज़्ज़त के साथ हुसैन[अ०] का नाम आना बल्कि हुसैन[अ०] का नाम ही इज़्ज़त की पहचान बन जाना इस बात की निशानी है कि हुसैन[अ०] वह हैं जिन्हें ख़ुद अल्लाह ने मुल्क वाला बनाया था यानी इज़्ज़त दी थी।

जिसके हाथ में सब कुछ होता है जब वह किसी को कुछ देता है तो लेने वाले की शान कुछ और ही होती है। इसके उलट हमारे हाथ में कुछ भी नहीं है। हमारे सामने मिट्टी, मिट्टी है और मिट्टी ही रहेगी। हमारा जी चाहे तो ज़िन्दा रहें या ख़ुद भी मिट्टी में मिल जाएं मगर हमारे कहने से मिट्टी कभी नहीं बदलेगी। हमें अल्लाह ने इतना कंट्रोल नहीं दिया है। जैसे ही हम मिट्टी के अंदर जाते हैं वैसे ही चार दिन के बाद ख़ुद भी मिट्टी बन जाते हैं।

अल्लाह हमारे-आपके बारे में जानता है कि हम मुसलमान हैं, मोमिन हैं, नमाज़ी हैं, रोज़ेदार हैं लेकिन इसके बाद भी वह हमारी मुसीबतों को दूर नहीं करता है जिसके बाद बन्दा तड़प उठता है कि पता नहीं क्या बात है क्योंकि हम तो बराबर नमाज़ पढ़ते हैं, बराबर रोज़ा रखते हैं, क़ुरआन भी पढ़ते हैं, दूसरे अच्छे काम भी करते हैं मगर दो महीने हो गए बीमारी जाती ही नहीं है। सवाल यह है कि क्या नमाज़ डाक्टर की फ़ीस का नाम है? इस नमाज़ से बीमारी का क्या लेना-देना? क्या कोई इसलिए नमाज़ पढ़ता है कि उसकी बीमारी चली जाए? अगर कोई इसलिए नमाज़ पढ़ता है तो फिर उसे नमाज़ पढ़ना ही नहीं चाहिए क्योंकि बेकार में मेहनत करने से कोई फ़ाएदा नहीं है। नमाज़ अल्लाह से क़रीब होने के लिए पढ़ी जाती है, अब चाहे सेहत रहे या बीमारी। नमाज़ से बीमारी का कोई लेना-देना नहीं

है। चूँकि आदमी अल्लाह को जानता-पहचानता नहीं है बल्कि बस कलमा पढ़कर मुसलमान हो गया है इसलिए जैसे ही कोई मुसीबत आती है तो झट से शिकायत करने लगता है। जबकि इसके उलट यह सोचना चाहिए कि जितना अल्लाह हमारे हाल पर मेहरबान है उतना मेहरबानी करने वाला और हमदर्द तो कोई है ही नहीं और न हो सकता है।

अल्लाह के एहसानों को गिनाते हुए हमारे चौथे इमाम[अ०] ने बड़ी अजीब बात कही है कि इस दुनिया में आँखें खोलने से पहले जितनी मंज़िलें थीं उन सारी मंज़िलों से आगे बढ़ने के बाद अल्लाह ने हमें जब इस दुनिया में भेजा तो हमारे ऊपर पहला करम यह किया कि हमें उस माँ की गोद में भेजा जो बड़ी हमदर्द थी। पेट में रखा तो माँ के पेट में रखा और इस दुनिया में भेजा तो माँ की गोद में भेजा। अगर बाप के हाथों में दे दिया होता तो पता नहीं कि क्या होता लेकिन हम तजुर्बा करके समझ गए हैं कि अल्लाह क्या चाहता था।

सुबह आफ़िस जाना था लेकिन ग्यारह बजे घर से निकले। घर वापस आते-आते रात के ग्यारह-बारह बज गए। खाना खाने के बाद एक बजे लेटे और दो बजे बच्चा चौंक कर उठ गया और रोना भी शुरू कर दिया। अब देखिए! बाप का ग़ुस्सा। आफ़िस में तो किसी पर अपना ग़ुस्सा उतार नहीं सकते इसलिए अब सारा ग़ुस्सा उस मासूम बच्चे पर उतरेगा जिसे अभी पता भी नहीं है कि उसके रोने से किसे तकलीफ़ हो रही है और किसे आराम मिल रहा है। एक बार डांट दिया जिस पर बच्चा और रोया क्योंकि उसने डांट सुनी थी और डांट के बाद तो उसे रोना ही था। बाप डांटता चला जाता है और उसका रोना किसी भी तरह से कम नहीं होता बल्कि बढ़ता ही चला जाता है। उधर उसका रोना बढ़ रहा है और इधर बाप का ग़ुस्सा आसमान को छू रहा है। आख़िर में जब कुछ बस न चला तो माँ से कहा कि इसे उठाकर चारपाई से नीचे फेंक दो। अगर यह काम माँ ने पहले ही कर लिया होता तो कभी यह दिन न देखना पड़ता। उसने नौ महीने अपने पेट में रखा मगर उसे कभी ग़ुस्सा नहीं आया। इसके बाद अपनी गोद में प्यार से रखकर पाला-पोसा

और बड़ा किया जिसमें उसकी रातों की नींद भी हराम हुई लेकिन उसने कभी उठाकर नहीं फेंका।

यह बस अल्लाह का ही करम था कि उसने बच्चे को बेदर्द बाप की गोद में नहीं रखा बल्कि मामता से भरी माँ की गोद में रखा जिससे उसका नाम ही हमदर्द माँ पड़ गया।

बहरहाल जितनी हमदर्दी अल्लाह अपने बन्दों के साथ करता है उतनी हमदर्दी कोई नहीं करता। अल्लाह माँ से बढ़कर, बाप से बढ़कर, रिश्तेदारों से बढ़कर बल्कि नबियों और रसूलों से भी बढ़कर अपने बन्दों के साथ हमदर्दी करने वाला है क्योंकि सारी दुनिया में जो *रहमतुल लिल आ-ल-मीन*[1] था उसे भी उसी ने *रहमतुल लिल आ-ल-मीन* बनाया था।

हम ख़ुद भी अपने लिए उतने हमदर्द नहीं हैं जितना हमदर्द हमारे लिए अल्लाह है। अगर आदमी इस सच्चाई को समझ ले तो फिर अगर अल्लाह उसे बीमार भी रखेगा तो उसे बीमार होने में कोई तकलीफ़ नहीं होगी? अगर वह ग़रीब रखेगा तो ग़रीब रहने में कोई दिक़्क़त नहीं होगी? हो सकता है कि बन्दे के लिए ग़रीब होने में ही भलाई हो। हो सकता है कि उसके लिए बीमारी में ही भलाई हो। क्या ठीक है और क्या ग़लत, यह तो अल्लाह जानता है। इसलिए किसी के भी दिमाग़ में उसके इल्म को चेलेंज करने की बात नहीं आना चाहिए, हर पल इस बात का ध्यान रहे।

इसलिए अल्लाह जिस हाल में भी रखे बन्दे को उसी हाल में ख़ुश रहना चाहिए कि अगर हमारा मालिक हमें इसी हाल में रखना चाहता है तो हमें उसके लिए इसी हाल में रहना है। इससे आगे बढ़कर आदमी को कुछ सोचने की छूट भी नहीं है। यह तो लोगों की आदत है कि बात-बात पर रोया-धोया करते हैं मगर जो दिल से अल्लाह के बन्दे होते हैं और जिनका अल्लाह पर भरपूर ईमान होता है वह जिस हाल में भी रहें उनके यहाँ न कोई शिकायत होती है, न रोना-धोना और न अल्लाह को बुरा-भला कहना। जिस हाल में रहते हैं उसी में ख़ुश रहते हैं।

---

[1] सारी दुनिया के लिए रहमत वाला (अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] को कहा जाता है और यह क़ुरआन का एलान है।

इसलिए आदमी को हर हाल में अल्लाह पर ही भरोसा करना चाहिए और अगर कुछ कहना-सुनना भी हो तो बस उसी से कहना-सुनना चाहिए। कुछ भी हो जाए, आदमी को किसी दूसरे से अल्लाह की शिकायत नहीं करना चाहिए। अल्लाह को सब से बुरी बात यही लगती है कि उसकी शिकायत दूसरे बन्दों से की जाए। भला बन्दा अल्लाह के मुक़ाबले में कैसे आ सकता है?

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि अल्लाह किसी ख़ास वजह से अपने अच्छे बन्दों को मुसीबतों में डाल देता है क्योंकि ऐसा किए बिना उनके अंदर छुपा हुआ कमाल बाहर आ ही नहीं सकता। वह अपने बन्दों पर होते हुए हर तरह के ज़ुल्म और टूटती हुई मुसीबतों को देखता रहता है मगर बर्दाश्त कर लेता है क्योंकि इसके बदले में बन्दे को कुछ मिलने वाला होता है जो इन मुसीबतों को झेले बिना मिल ही नहीं सकता था। इसीलिए अल्लाह इतना हमदर्द और इतना मेहरबान होने के बाद भी यही चाहता है कि उसका बन्दा सारी मुसीबतों को बस किसी तरह से झेल ले।

अपने वक़्त का बड़ा बादशाह नमरूद जब हज़रत इब्राहीम[अ०] को आग में डाल रहा था तो अगर अल्लाह चाहता तो उस आग को पहले ही बुझा देता मगर बात यह थी कि यह इम्तेहान दिए बिना हज़रत इब्राहीम[अ०] को वह दर्जा न मिल पाता जो बाद में मिला। हज़रत इब्राहीम[अ०] आग में चले भी गए, आग बुझ भी गई और उनका दर्जा भी बढ़ गया। अल्लाह अपने बन्दे को मुसीबत में इसीलिए देख लेता है ताकि उसके मुक़ाबले में उसे कोई ऐसा बदला दिया जाए जो उस मुसीबत के बिना मिल ही नहीं सकता था। अल्लाह के अच्छे बन्दों का यही ईमान है जो हर जगह उन्हें मज़बूती के साथ डटे रहने देता है वरना कौन है जो अपने आराम को छोड़कर मुसीबतों का गले लगाएगा? हर आदमी मुसीबतों में आराम को ढूँढता फिरता है मगर अल्लाह के अच्छे बन्दे हर हाल में ख़ुश रहते हैं क्योंकि वह यह बात जानते हैं कि अल्लाह उनके साथ जो भी करेगा वह उससे कहीं अच्छा होगा जो वह अपने लिए चाहते हैं।

अल्लाह ऐसा मालिक है। अब आख़िर में एक बात और रह जाती है कि अगर कोई अल्लाह से यह कहने लगे कि ऐ अल्लाह! तेरे बन्दों ने बड़ी मुसीबतें उठाई हैं। अब जब मर कर चले गए हैं तो कोई इनकी क़ब्र को न खोलने पाए। ज़िन्दगी भर दुख सहे, कम से कम मरने के बाद अब तो आराम से सो जाएं। अगर कोई ज़ालिम तेरे किसी अच्छे बन्दे की क़ब्र को हाथ भी लगाना चाहे तो उसके हाथ टूट जाएं और अगर कोई ज़ालिम उधर अपनी आँख उठाकर भी देखे तो उसकी आँख फूट जाए। तेरा बन्दा कम से कम मरने के बाद तो सुकून से रहे।

ज़ाहिर सी बात है कि इसके जवाब में अल्लाह यही कहेगा कि मुझे राए मत दो। मुझे जो करना है वह मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। अगर ज़ालिम यह ज़ुल्म भी करना चाहता है तो कर ले, जैसे उसने ज़िन्दगी में मेरे बन्दे को इतना सताया था लेकिन मैंने उसे बर्दाश्त किया उसी तरह अगर अब यह उसकी क़ब्र को भी हाथ लगाएगा तो मैं इसे भी बर्दाश्त कर लूँगा क्योंकि इसके पीछे भी एक बड़ी वजह पाई जाती है।

यही वजह है कि इतिहास के पन्नों में ऐसी बहुत सारी बातें मिलती हैं कि आज उनकी क़ब्र खोली जा रही है, कल उनकी। कभी हज़रत हुर[अ०] की क़ब्र को हाथ लगाया जा रहा है और कभी जनाबे आमेना[अ०] की क़ब्र को। यह सब क्या हो रहा है? ऐ पालने वाले! अपने बन्दों पर तेरी हमदर्दियाँ कहाँ चली गईं? अगर कोई इनकी क़ब्रों को हाथ लगाता है तो अज़ाब क्यों नहीं आ जाता? अल्लाह वही बात दोहराएगा कि मुझे राए मत दो। मैं अपने बन्दे के ऊपर इस ज़ुल्म को भी देख लूँगा। कम से कम जब क़ब्र खुलेगी और लोग लाश देखेंगे तो अपने आप उनकी समझ में यह बात तो आ ही जाएगी कि यह मिट्टी किस पर हुकूमत करती है और वह कौन है जिसे हम कंट्रोल देते हैं तो वह इस मिट्टी पर हुकूमत करने लगता है।

यह बात मशहूर है और सभी सुनते रहते हैं कि जब हज़ार साल के बाद हज़रत हुर[अ०] की क़ब्र को खोला गया तो देखने वालों ने यही देखा था कि माथे पर एक रूमाल बंधा हुआ है। सवाल हुआ कि यह रूमाल कैसा है तो जवाब दिया गया कि यह

वही रूमाल है जो इमाम हुसैन[अ०] ने हुर के आख़िरी वक़्त में उनके माथे पर बांधा था और रूमाल बांधते हुए यह भी कहा था कि ऐ हुर! तुम्हारी क़िस्मत कितनी अच्छी है! यह रूमाल मेरी माँ का है। जैसे ही सुना तो सुनने वाले ने कहा कि अगर यह अल्लाह के रसूल[स०] की बेटी का रूमाल है तो इससे बड़ा तबर्रुक और क्या हो सकता है, क्यों न इस रूमाल को ले लिया जाए? जैसे ही उस रूमाल को हाथ लगाया, वैसे ही ताज़ा ख़ून बहना शुरू हो गया।

ऐ अल्लाह! इतना बड़ा ज़ुल्म मरने के बाद मरने वाले पर हो रहा है और तू देख रहा है? अल्लाह कहेगा कि कि अगर मैं यह सब न देखूँ तो दुनिया को पता कैसे चलेगा कि मेरे रास्ते में मरने वाले ज़िन्दा कैसे रहते हैं। यह है शहीद जिसके लिए अल्लाह का वादा है कि वह मरने के बाद भी ज़िन्दा रहता है।

अल्लाह दुनिया वालों को अपने अच्छे बन्दों का असली चेहरा दिखाने के लिए उन पर टूटने वाली सारी मुसीबतें देखता रहता है ताकि पता चल जाए कि यह वह मरने वाले और हैं जो मर कर भी ज़िन्दा रहते हैं और मर कर मिट्टी में मिल जाने वाले और होते हैं। क़ब्र में जाने के बाद जो मिट्टी बन जाएं वह दूसरे होते हैं और क़ब्र में जाने के बाद भी जिनके बदन का ख़ून ताज़ा रहे वह और होते हैं।

ऐ हुसैन[अ०] के साथियो! आपके ऊपर हमारी जानें फ़िदा हो जाएं। हम ही नहीं बल्कि हमारे माँ-बाप भी फ़िदा हो जाएं। आप सब भी पाक और जिस ज़मीन में आप दफ़न हुए वह ज़मीन भी पाक है।

(7)

अल्लाह का हुक्म

इतनी बात हर समझदार आदमी समझता है कि जिसका मुल्क होता है वहाँ क़ानून भी उसी का चलता है। ऐसा कभी नहीं हो सकता कि मुल्क किसी का हो और क़ानून किसी और का। आज जो दुनिया में इतने सारे मुल्क बने हुए हैं और जिन्हें ख़ुद लोगों ने बनाया है, वहाँ भी क़ानून यही है कि जिसके हाथ में हुकूमत होती है क़ानून भी वही बनाता है। अगर किसी मुल्क में बादशाह है तो वह क़ानून बनाता है औ अगर डेमॉक्रेसी है तो पॉर्लियामेंट में चुने हुए लोग क़ानून बनाते हैं। यह भी हो सकता है कि पॉर्लियामेंट में पब्लिक के हाथों चुनकर आए हुए लोगों से कहीं अच्छे क़ानून दूसरे लोग बना सकते हैं या दूसरे उनसे ज़्यादा पढ़े-लिखे हों लेकिन उनका बनाया हुआ क़ानून कोई नहीं मानेगा। क़ानून उन्हीं का चलेगा जिन्हें क़ानून बनाने का अधिकार दिया गया है।

अब अगर मुल्क उसका है जो सारी दुनिया में इल्म की भीख बांटने वाला है जिसकी तरफ़ हर आदमी हाथ फैलाए खड़ा है, अगर वह अपने मुल्क का क़ानून नहीं बनाएगा तो फिर कौन

बनाएगा? बड़ी अजीब बात है कि अगर दुनिया के जाहिल-गंवार क़ानून बनाने वाले क़ानून बनाएं तो कोई कुछ नहीं बोलता लेकिन अगर अल्लाह क़ानून बनाकर भेज दे तो हर एक उंगली उठाने लगता है!

जिस मुल्क में हम रहते हैं वहाँ क़ानून मुसलमानों ने नहीं बनाया है मगर जब मुल्क का क़ानून बन गया तो अब मुसलमान भी उसे मानेगा और दूसरे भी। इसी तरह अगर किसी मुल्क में क़ानून मुसलमानों ने बनाया हो तो वहाँ बसने वाले दूसरे लोग भी उस क़ानून को मानते हैं। ईसाईयों ने बनाया है तो यहूदी उस क़ानून को मानेंगे और अगर यहूदियों ने बनाया है तो ईसाई मानेंगे। ऐसा नहीं हो सकता कि कोई कहे कि इस मुल्क का क़ानून मुसलमानों ने नहीं बनाया है इसलिए सब चलेंगे बाईं तरफ़ और हम चलेंगे दाईं तरफ़। किसी यहूदी मुल्क में अगर कोई ईसाई पहुँच जाए तो वह यह नहीं कह सकता कि मैं तो यहूदी धर्म को नहीं मानता इसलिए मैं इस मुल्क के क़ानून पर नहीं चलूँगा। सारी दुनिया में लोग मुल्क के क़ानून पर ही चलते हैं। कोई कुछ नहीं बोलता और अगर कोई कुछ कह दे और क़ानून को न माने तो सब उसे ग़द्दार (देशद्रोही) कहते हैं। यही वजह है कि दुनिया में सब ने इस बात को मान लिया है कि धर्म अपना-अपना मगर क़ानून मुल्क का। ध्यान देने की बात यह है कि दीन-धर्म के मामले में सब को छूट है लेकिन जैसे ही क़ानून की बात आती है तो सब मानने पर मजबूर हो जाते हैं। कोई एक ख़ुदा को मानता है और कोई तीन सौ साठ ख़ुदाओं को, वह इन्हें मानता है और यह उन्हें, वह उन्हें अपना लीडर मानता है और यह उन्हें, इन सारी बातों में हर एक को छूट है लेकिन मुल्क का क़ानून हर एक को मानना होगा और अगर कोई अपनी राए देना चाहे तो उसे देशद्रोही कहा जाएगा।

कितनी अजीब सी बात है कि आदमी के बनाए क़ानून के आगे कोई बोले तो उसे सब देशद्रोही कहते हैं लेकिन जब अल्लाह के क़ानून के आगे कोई बोलता है तो उसे सब से बड़ा लीडर मान लिया जाता है!

दीन का क़ानून हर दौर में ऐसा ही रहा है और सब ने उसके साथ यही किया है और आज भी ऐसा ही है। दीन के क़ानून के लिए सब से बड़ी मुसीबत यह है कि दुनिया के किसी क़ानून के आगे कोई बोलने की हिम्मत नहीं करता मगर दीन के क़ानून पर उंगली उठाने को हर आदमी अपना जन्मसिद्व अधिकार समझता है। मुसलमान हों या दूसरे, कहीं न कहीं सब भटक जाते हैं। ख़ुद मुसलमानों का हाल यह है कि कहते दिख जाते हैं कि अगर अल्लाह ने यह क़ानून यूँ न बनाया होता तो बड़ा अच्छा रहता। अब कोई उन से कहे कि जब अल्लाह का क़ानून बन रहा था तो आप उसी वक़्त जन्म ले लेते वह आपकी राए भी ले लेता तो जवाब मिलेगा कि जन्म कैसे ले लेते क्योंकि जन्म देने वाला तो वही है। अब भला इस पागलपन का क्या इलाज है कि जब पता है कि अल्लाह ही दुनिया में भेजने वाला है तो फिर ऐसा सवाल क्यों? अगर वह हमें बना सकता है तो क्या क़ानून नहीं बना सकता? अगर वह क़ानून बनाने में ग़लती कर सकता है तो हो सकता है कि वही ग़लती सवाल करने वाले को बनाने में भी हो गई हो। हो सकता है कि तुम्हें पागल बनाया हो मगर तुम अपने आप को समझदार समझ रहे हो। जवाब मिलेगा कि नहीं! यह कैसे हो सकता है? उसने तो हमें बहुत सारा कमाल देकर भेजा है।

जब वह कमाल वाला बन्दा बना सकता है तो क़ानून वाला क़ानून भी बना सकता है।

दो चीज़ें ऐसी हैं जिनमें से एक में हर आदमी रास्ते पर रहता है और एक जगह क़रीब-क़रीब सब भटक जाते हैं। दोनों बातें बराबर की हैं मगर न जाने क्या बात है कि एक रास्ते पर सब सीधे रहते हैं और दूसरे रास्ते पर सब बहक जाते हैं। किसी भी दीन में जब उसूले दीन पढ़ाए जाते हैं और अल्लाह के सिफ़ात (गुणों) की बात आती है तो उसके दो कमाल हर दीन में पढ़ाए जाते हैंः एक उसका इल्म और दूसरे उसकी क़ुदरत (ताक़त)।

एक यह कि अल्लाह आलिम[1] है और दूसरे यह कि वह हर चीज़ पर क़ादिर[2] है।

अपनी किताब क़ुरआन में भी अल्लाह ने खुला एलान कर दिया हैः

बेशक! अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।[3]

वह हर चीज़ के बारे में जानता है।[4]

तुम्हारे पालने वाले के इल्म से बाहर कोई चीज़ नहीं है।[5]

हर मुसलमान यह मानता है कि अल्लाह हर चीज़ के बारे में जानने वाला (आलिम) भी है और क़ादिर भी यानी हर चीज़ उसके हाथ में है लेकिन जब आदमी अपने आप को अल्लाह के सामने रखकर सोचता है तो उसकी क़ुदरत (ताक़त) के बारे में मानता है कि जितनी ताक़त उसके पास है उतनी हमारे पास नहीं है मगर जब इल्म की बात आती है तो सोचता है कि अपने मामलों को जितना हम जानते हैं उतना कोई नहीं जानता। ऐसा सोचते सब हैं लेकिन ज़बान से कहता कोई नहीं है क्योंकि इसके लिए बड़ी हिम्मत चाहिए। वैसे ऐसी हिम्मत वाले भी दुनिया में पैदा हुए हैं। आज हम यह कह रहे हैं कि यह अल्लाह के मामले हैं, इन में बन्दों को नहीं बोलना चाहिए लेकिन कल हम से बड़ी हिम्मत वाले भी पैदा हुए थे जो कह रहे थे कि यह हमारा मामला है। यह हम तय करेंगे कि हमारी गर्दन पर कौन हुकूमत करेगा और कौन नहीं करेगा और इस मामले में अल्लाह को कुछ नहीं बोलना चाहिए।

बहरहाल इस तरह की जितनी भी बातें आदमी के दिमाग़ में जन्म लेती हैं उन सब की बस एक ही वजह है कि आदमी ताक़त में तो यह मानता है कि जो ताक़त अल्लाह के पास है वह हमारे पास नहीं है, तभी तो उसके आगे हाथ फैलाता है कि

---

[1] सब कुछ जानने वाला है

[2] हर काम कर सकता है।

[3] सूरए बक़रा/20

[4] सूरए बक़रा/231

[5] सूरए यूनुस/61

ऐ अल्लाह! बच्चा नहीं है। बच्चा दे दे या नौकरी नहीं है, नौकरी दे दे। यह अल्लाह से मांगना ही बता रहा है कि यह काम हमारे बस का नहीं है।

इसके उलट जब इल्म की बात आती है तो न जाने कहाँ से यह दिमाग़ों में बैठ गया है कि अपने मामलों को जितने अच्छे ढंग से हम जानते हैं उतना अल्लाह भी नहीं जानता। बात बस इतनी सी है कि इस्लाम में रहते हुए यह सब कहने की हिम्मत नहीं है वरना आदमी सोचता तो ज़रूर है कि मग़रिब की नमाज़ तीन रकअत क्यों है? यह ''क्यों है'' का मतलब यही तो है कि अल्लाह ने हम से क्यों नहीं पूछा कि मग़रिब की नमाज़ तीन रकअत रखी जाए या चार रकअत। आदमी को यह सब पूछने का हक़[1] कहाँ से मिल गया है? जिसका मुल्क है उसने कहा कि अगर जीना है तो वैसे जियो जैसे मैंने कहा है।

मान लीजिए कि हम ने एक बहुत महंगी और नए मॉडल की गाड़ी ख़रीदी और उसके बाद सड़क पर निकल गए। हम ने देखा कि हमारे बराबर में एक गाड़ी चल रही है बीस हज़ार वाली, दूसरी चल रही है पंद्रह हज़ार वाली, तीसरी चल रही है पाँच हज़ार वाली और हम चला रहे हैं एक लाख वाली।। अब हम ने हिसाब लगाया कि यह चल रहे हैं तीस की स्पीड से, वह चल रहे हैं चालीस की स्पीड से तो जिस हिसाब से हम ने पैसा लगाया है हमें चलना चाहिए दौ सौ की स्पीड से। जैसे ही हम ने दौ सौ तक अपनी गाड़ी की स्पीड पहुँचाना चाही वैसे ही ट्रेफ़िक पुलिस वाला सामने आ गया और आते ही पूछा कि कहाँ जा रहे हैं? हम ने कहा कि आपने इन लोगों से नहीं पूछा कि यह सब कहाँ जा रहे हैं। थोड़ा इंसाफ़ से काम लीजिए! वह पाँच हज़ार की गाड़ी है और यह एक लाख की गाड़ी है। अगर यह दोनों गाड़ियाँ एक ही स्पीड से चलेंगी तो क्या यह नाइंसाफ़ी नहीं होगी? या तो इन से कहिए कि अपनी स्पीड और कम करें। अगर यह पाँच किलोमीटर की स्पीड से चलेंगे तो फिर बीस की स्पीड से हम चलेंगे। हम ने पैसा लगाया है इसलिए हम अपनी गाड़ी की स्पीड इन से ज़्यादा रखेंगे। कुछ तो हमारे पैसे की

---

[1] अधिकार

इज़्ज़त कीजिए। उसने कहा कि आपका पैसा अपनी जगह लेकिन जो इस मुल्क का क़ानून है उस पर आपको चलना होगा। हम ने कहा कि ठीक है। आप कहते हैं कि मुल्क का क़ानून है तो हम मान लेते हैं मगर एक बात हमारी समझ में नहीं आ रही है कि इस मुल्क के क़ानून का भी तो कोई भरोसा नहीं है क्योंकि यहाँ स्पीड लिखी है बीस, वहाँ लिखी है तीस, वहाँ लिखी हुई है पचास, वहाँ लिखी है सत्तर और वहाँ लिखी है सौ किलोमीटर प्रति घंटा। उसने कहा कि यह काम आपका नहीं है बल्कि हमारा काम है। हम जानते हैं कि कहाँ कितनी स्पीड होना चाहिए। हम ने कहा कि आप स्पीड के बारे में जानते हैं और हम अपनी गाड़ी के बारे में जानते हैं। यह फ़र्क़ तो देखिए! सस्ती गाड़ी अलग होती है और महंगी गाड़ी अलग होती है। उसने कहा कि गाड़ियों की क़ीमत से स्पीड तय नहीं होती है।

यानी जो दुनिया मनवाती जा रही है सब के सब आसानी से मानते जा रहे हैं और जैसे ही अल्लाह ने कहा कि यह चार रकअत वाली लिमिट है, यह दो रकअत वाली लिमिट है तो फ़ौरन कुछ लोग बोल पड़े कि हमें तो दो रकअत की जगह चार रकअत पढ़ने में कोई दिक़्क़त नहीं हो रही है। इसलिए दो की जगह चार रकअत ही पढ़ लेते हैं। ऊपर हम ने भी ट्रेफ़िक पुलिस से यही कहा था कि तीस की स्पीड वाली जगह पर हमें एक सौ बीस की स्पीड से चलाने में हमें कोई दिक़्क़त नहीं हो रही है और उसने भी यही कहा था कि बात आपकी दिक़्क़त की नहीं है बल्कि मामला क़ानून का है।

जब बन्दे क़ानून बनाते हैं तो सब आसानी मान लेते हैं मगर जब अल्लाह क़ानून बनाता है तो हर एक को उंगली उठाने का शौक़ हो जाता है और इसका सीधा सा मतलब यह है कि अपनों को तो पहचान लिया है लेकिन अभी तक अल्लाह को नहीं पहचाना है।

सवाल यह है कि हम ताक़त के मामले में तो मान लेते हैं कि जो ताक़त अल्लाह के पास है वह हमारे पास नहीं है क्योंकि हम कभी यह नहीं कहते कि अल्लाह यह काम नहीं कर सकता मगर हम कर सकते हैं। अल्लाह की ताक़त के आगे हमारा हाल तो

यह है कि हम हर पल उसके सामने दुआ के लिए हाथ फैलाए रहते हैं। इसके उलट जब अल्लाह के इल्म की बात आती है तो हम फ़ौरन अल्लाह के बनाए क़ानून पर सवाल उठाने लगते हैं कि ऐसा क्यों है, वैसा क्यों है या ऐसा होना चाहिए था और वैसा होना चाहिए था। ऐसा क्यों नहीं है? ठंड के मौसम में सुबह की नमाज़ बिना वुज़ू के ही होती या कम से कम बिना ग़ुस्ल के होती तो अच्छा होता। इसके बदले में अगर गर्मी में बिना ज़रूरत के ग़ुस्ल करा दिया होता तो हम आसानी से कर लेते क्योंकि नहाना तो होता ही है। यानी जैसे-जैसे हम बताते जाएं वैसे-वैसे अल्लाह करता जाए।

आदमी ऐसा क्यों सोचता है कि ताक़त में तो अल्लाह आगे है मगर जब अल्लाह के इल्म की बात आती है तो आदमी को लगता है कि क़ानून बनाते वक़्त अल्लाह को हम से पूछना चाहिए था और जैसा हम कहते वैसा क़ानून बनाना चाहिए था। ऐसा होता तो बड़ा अच्छा क़ानून बनता।

असल में यह बात बहुत पहले से चली आ रही है। जब अल्लाह ने सब फ़रिश्तों से कहा था कि आदम को सजदा करो तो शैतान ने यही कहा था कि मैं आदम को सजदा नहीं कर सकता क्योंकि तूने आदम को मिट्टी से बनाया है और मुझे आग से बनाया है। शैतान भी अल्लाह की ताक़त को मानता था मगर इल्म में अल्लाह को अपनी राए दे रहा था कि क़ानून तो यह होना चाहिए था कि मेरी जगह आदम मुझे सजदा करते क्योंकि आग मिट्टी से ऊँची होती है। यह बात बहुत पुरानी है।

यह तो सब ही जानते हैं कि जनाबे सुलेमान[अ०] की हुकूमत कितनी बड़ी और मज़बूत थी। मच्छरों ने जनाबे सुलेमान[अ०] के पास आकर कहा कि यह हवा हमें बहुत तंग करती है। यहाँ से वहाँ से उड़कर जैसे ही हम थक-हारकर एक जगह बैठते हैं वैसे ही हवा आती है और हमें घर से बेघर बना देती है। अल्लाह ने आपको हुकूमत दी है और आपकी हुकूमत हवा के ऊपर भी है इसलिए आप ज़रा हवा को मना कर दीजिए कि हम ग़रीबों को घर से बेघर न किया करे और हमें भी थोड़ा चैन से कहीं बैठने दिया करे। जनाबे सुलेमान[अ०] ने कहा कि ठीक है। तुम ने जो

बात कही है वह हम ने नोट कर ली है मगर हम अल्लाह के नबी हैं। हम किसी एक की बात सुनकर फ़ैसला नहीं करते हैं। हम हवा को भी बुलाते हैं और उससे भी पूछते हैं कि क्या बात है। मच्छरों ने भी जोश में कह दिया कि हाँ! ठीक है मगर जैसे ही जनाबे सुलेमान[अ०] ने हवा को बुलाया, वैसे ही मुक़दमा ख़त्म हो गया क्योंकि जिसने शिकायत की थी वही ग़ायब हो गया था।

अगर कोई कमज़ोर किसी ताक़त वाले से टकराना चाहता है तो उसके साथ ऐसा ही होता है क्योंकि अगर बन्दा अल्लाह की ताक़त को चैलेंज करेगा तो अल्लाह कहेगा कि अगर तुम सोचते हो कि तुम्हारे पास ज़्यादा ताक़त है तो वहाँ बैठकर क्यों बोल रहे हो? यहाँ आकर बताओ कि तुम्हारे पास कितनी ताक़त है? और जैसे ही बन्दा वहाँ पहुँचेगा वैसे ही मुक़दमा ख़त्म हो जाएगा।

अल्लाह ने हमें छूट दे रखी है इसलिए आदमी अपनी सारी नासमझी इल्म में ही दिखाता है और समझता है कि जो कुछ हम जानते हैं वह कोई नहीं जानता। इसलिए जो क़ानून हम बनाएंगे वैसा क़ानून कोई दूसरा नहीं बना सकता। यहाँ तक कि हमारे बनाए क़ानून के मुक़ाबले में अल्लाह का बनाया क़ानून भी नहीं ठहर सकता।

यह सारी बीमारी पहले ही दिन से आदमी के अंदर घुस गई थी जब शैतान ने जनाबे आदम[अ०] को सजदा करने से मना कर दिया था। यह शैतानी चाल है जो आदमियों के अंदर भी रच-बस गई है। यह शैतान ही है जो लोगों को समझाता है कि अल्लाह के क़ानून के आगे अपना सर मत झुकाना वरना तुम्हारी ताक़त छिन जाएगी।

इसलिए अल्लाह की तौहीद हम से कहती है कि अगर मुल्क अल्लाह का है तो इस मुल्क में क़ानून भी अल्लाह का ही चलेगा। हुक्म बस अल्लाह का चलेगा क्योंकि क़ुरआन का हुक्म भी यही है।

इसीलिए अल्लाह ने जब बड़े से बड़े आदमी को भी इस दुनिया में भेजा तो सब को भेजने के बाद यही एलान किया:

> उसने तुम्हारे लिए दीन में वह रास्ता रखा है जिसकी नसीहत नूह को की है और जिसकी 'वही' पैग़म्बर की तरफ़ भी की है और जिसकी नसीहत इब्राहीम, मूसा व ईसा को भी की है कि दीन को क़ायम करो और इसमें तफ़रक़ा (झगड़ा) मत पैदा होने दो।[1]

अल्लाह अपनी किताब क़ुरआन में एलान कर रहा है कि जिस नबी को भी हम ने भेजा था उसके पास जो-जो क़ानून था वह सब हम ने भेजा था।

इस पूरी दुनिया में सब से अच्छे लोग अल्लाह के नबी हैं। कम से कम मुसलमान तो यही मानते हैं। एक लाख चौबीस हज़ार नबी इस दुनिया के सब से अच्छे लोग हैं। अपने-अपने वक़्त का हर नबी अपने मानने वालों में सब से अच्छा होता है। इन एक लाख चौबीस हज़ार नबियों में भी 313 नबी बाक़ी सारे नबियों से अच्छे हैं क्योंकि अल्लाह ने उन्हें रसूल बनाया है और बाक़ी सब को नबी बनाया है। इन 313 में भी पाँच सब से अच्छे हैं क्योंकि अल्लाह ने उन्हें शरीअत (इस्लामी क़ानून) देकर भेजा था, दूसरे नबियों को शरीअत देकर नहीं भेजा था। इसका मतलब यह है कि इस पूरी दुनिया का निचौड़ यही 5 लोग हैं जिन्हें अल्लाह ने शरीअत देकर भेजा था और यह पाँच नबी जनाबे नूह[अ०], जनाबे इब्राहीम[अ०], जनाबे मूसा[अ०], जनाबे ईसा[अ०] और हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[अ०] हैं। इन पाँचों नबियों से अल्लाह ने यही कहा था कि क़ानून वह है जो हम ने बनाया है। दीन का भी क़ानून वही है जो हम ने बनाया है।

जब यह दुनिया के सब से बड़े इन्सान क़ानून नहीं बना सकते तो फिर किसी दूसरे को यह छूट कहाँ से मिल जाएगी कि वह अल्लाह के मुल्क में क़ानून बनाकर अपना क़ानून लागू करे ?

अल्लाह ने दुनिया के 5 सब से बड़े इन्सानों को अपना क़ानून देकर कहा है कि आप सब का काम इस क़ानून को लागू करना है। फिर आख़िर में अपने रसूल से यह भी कह दियाः

---

[1] सूरए शूरा/13

ख़बरदार! जाहिलों की बात मत मानिएगा। वह जो कह रहे हैं उन्हें कहने दीजिए। आपको बस हमारे क़ानून पर चलना है।

इसका मतलब यह है कि इस दुनिया के सब से बड़े इन्सान यानी अल्लाह के आख़िरी नबी हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] भी क़ानून नहीं बना सकते और उन्हें भी अल्लाह के क़ानून पर ही चलना है। अब भला दूसरा कोई अल्लाह के क़ानून पर कैसे उंगली उठा सकता है?

हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] को हम लोग अपनी ज़बान में 'पैग़म्बर' कहते हैं जिसका मतलब होता है ''पैग़ाम (मैसेज) लाने वाला''। आप रसूल हैं यानी अल्लाह की रिसालत (अल्लाह के मैसेज) को पहुँचाने वाले हैं। पहुँचाना पैग़म्बर का काम है लेकिन बनाना पैग़म्बर का काम नहीं है। फिर क़ानून बनाने वाला कौन है? क़ानून बनाने वाला बस अल्लाह है और वही मालिक भी है। सारा क़ानून उसके हाथ में है। मुल्क उसका और क़ानून भी उसी का है।

जब कोई क़ानून लागू कराना होता है तो क़ानून हर एक के हाथ में नहीं दे दिया जाता बल्कि कुछ लोगों को चुना जाता है। गाँव का क़ानून उसे दिया जाता है जिसके हाथ में गाँव होता है, शहर का क़ानून कलेक्टर को दिया है, मोहल्ले का क़ानून इंस्पेक्टर के हाथ में दिया जाता है और मुल्क का क़ानून राजा या प्रधानमंत्री के हाथ में दिया जाता है। अब अगर दुनिया वाले इतनी बात जानते हैं कि क़ानून लागू कराने के लिए किसके हाथ में देना चाहिए तो क्या अल्लाह इस बात को नहीं जानता? अल्लाह भी इस बात को ख़ूब जानता है कि क़ानून लागू कराने के लिए किसके हाथ में देना चाहिए। अगर क़ानून ऐसा है जिसे सौ साल चलना है तो उसे चलाने के लिए किसी और को भेजा जाएगा। अगर क़ानून ऐसा है जिसे हज़ार साल चलना है तो उसे लागू करने के लिए किसी दूसरे को भेजा जाएगा। अगर क़ानून किसी गाँव में चलना है तो वह किसी और के हाथ में होगा और अगर क़ानून शहर के अंदर चलना है तो वह किसी और के हाथ में होगा। इसी तरह अगर देश में क़ानून लागू होना है तो वह किसी और के हाथ में होगा। अगर क़ानून ऐसा है जो आदमियों

के साथ-साथ जिन्नातों और फ़रिश्तों पर भी लागू होता है तो यह क़ानून किसी ऐसे आदमी के हाथ में होगा जो आदमी को भी पढ़ा सके, जिन्नात को भी सिखा सके और फ़रिश्तों को भी रास्ता दिखा सके। इसीलिए अल्लाह के आख़िरी रसूल को ''रसूलुस्स-क़-लैन'' यानी दोनों दुनियाओं का रसूल कहा जाता है, ज़मीन वालों का भी और आसमान वालों का भी।

अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] जो क़ानून लाए हैं वह आदमियों और जिन्नों दोनों के लिए है। यह क़ुरआन आदमियों को भी रास्ता दिखाने वाला है और जिन्नात को भी। अल्लाह ने इन्सानों को भी अपनी इबादत के लिए बनाया है और जिन्नात को भी और इस काम में यह दोनों बराबर हैं यानी ईमान लाने में भी दोनों बराबर हैं और अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] की रिसालत भी दोनों के लिए है।

यह है अल्लाह का क़ानून जिस पर आम लोगों से लेकर उसके आख़िरी रसूल[स०] तक हर एक को चलना है। क़ानून पर चलना तो सभी को है मगर कुछ चलते हैं और कुछ नहीं चलते। अगर क़ानून पर न चलने वाले न हों तो फिर जेलें क्यों बनाई जाएं? सज़ाएं क्यों तय की जाएं? इसका मतलब यह है कि क़ानून सब के लिए बनता है मगर कुछ लोग शरीफ़ होते हैं जो क़ानून को मानते हैं और कुछ लोग नीच होते हैं जो क़ानून पर नहीं चलते। अगर किसी में यह कमज़ोरी होती है कि कभी क़ानून पर चलता है और कभी नहीं चलता तो ऐसे आदमी को दूसरों के लिए नमूना नहीं बनाया जा सकता। अगर ऐसे आदमी को नमूना बना लिया गया तो क़ानून पर चलने वाले दूसरे लोग भी कभी क़ानून पर चलेंगे और कभी नहीं चलेंगे।

अगर अल्लाह अपने क़ानून के लिए किसी को नमूना बना दे तो इसका मतलब यह नहीं है कि वह आदमी क़ानून बनाने वाला भी है। इसका मतलब यह है कि उसके सामने क़ानून था और वह क़ानून को देखकर उस पर चला है मगर हमारे सामने बस वह आदमी है जो अल्लाह के क़ानून को देखकर उस पर चला है। हम उसे देखते जाएंगे और जैसा-जैसा वह करता है हम भी वैसा ही करते जाएंगे। इसीलिए क़ुरआन करीम ने हम से

साफ़-साफ़ कह दिया है कि तुम्हारे लिए रसूल[स०] सब से अच्छा नमूना हैं। इसका मतलब यह है कि जो कुछ रसूल[स०] करते जाएं और जो कुछ कहते जाएं हम भी बस वैसे-वैसे ही करते जाएं। अगर हम ने ऐसा कर लिया तो इसका सीधा सा मतलब यह होगा कि हम ने अल्लाह के क़ानून को मान भी रहे हैं और उस पर चल भी रहे हैं। आदमी अल्लाह के क़ानून को मानता है, उसे बनाता नहीं है। ख़ुद अल्लाह के अख़िरी रसूल[स०] भी अल्लाह का क़ानून लेकर आए थे, उन्होंने भी क़ानून बनाया नहीं था। मगर अल्लाह के रसूल[स०] उसके भेजे हुए क़ानून पर इतनी पाबंदी से चले कि अल्लाह ने सब से कह दिया कि अब तुम्हारे लिए मेरा भेजा हुआ यह आख़िरी नबी नमूना है। इसे देखते जाओ और मेरे बनाए क़ानून पर चलते जाओ। यानी अल्लाह के क़ानून पर चलने में सब से आगे-आगे रसूले इस्लाम[स०] हैं और उनके पीछे-पीछे दूसरे सारे लोग हैं। इस बात को यूँ भी कह सकते हैं कि अल्लाह के क़ानून पर रसूले इस्लाम[स०] चल रहे हैं और उनके पीछे-पीछे सारी दुनिया चल रही है क्योंकि अल्लाह ने क़ुरआन में अपने रसूल[स०] से कह दिया है कि आपको हमारे क़ानून पर चलना है जिसके बाद हम आपको ऐसा बना देंगे कि सारी दुनिया आपके पीछे-पीछे चलेगी। आगे-आगे अल्लाह का क़ानून, उसके पीछे रसूले इस्लाम[स०] और उनके पीछे सारी दुनिया। क़ानून पर वह चल रहे हैं और हम उनके पीछे चल रहे हैं।

(8)

अल्लाह से मदद मांगना

मुसलमान मर्दों-औरतों में से हर एक रोज़ाना अल्लाह के सामने हाज़िर होता है और नमाज़ पढ़ता है जिसमें वह दो बातों का एलान करता हैः

> हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझ से ही मदद मांगते हैं।[1]

इस एलान से दो बातें सामने आती हैं। कुछ लोगों ने ''हम तेरी ही इबादत करते हैं'' कहने के बाद कहा कि इसका मतलब यह है कि अल्लाह के सिवा दूसरे किसी का न एहतेराम[2] किया जा सकता है, न उसकी इताअत[3] की जा सकती है, न उसके लिए खड़ा हुआ जा सकता है और न उस पर सलाम किया जा सकता है। इन लोगों के हिसाब से किसी को सलाम करना भी एक इबादत है, किसी के लिए खड़ा हो जाना भी एक इबादत है और किसी की बारगाह में हाज़िर होना भी इबादत है। इस तरह

---

[1] सूरए हम्द/5
[2] आदर
[3] हुक्म मानना

की न जाने कितनी बातें हैं जिनको पहले इबादत कहा गया और उसके बाद सब को ''हम तेरी ही इबादत करते हैं'' के मुक़ाबले में खड़ा कर दिया गया है कि अगर कोई आदमी किसी के एहतेराम में खड़ा हो जाए या उसे एक सलाम भी कर ले तो उसने शिर्क[1] किया है यानी ''हम तेरी ही इबादत करते हैं'' के मुक़ाबले में आ गया है। जबकि इबादत एक दूसरी चीज़ है जिसका इन सारी बातों से कोई जोड़ नहीं है। न इबादत किसी के लिए खड़े होने से इधर से उधर होती है और न किसी को सलाम करने से। यही वजह है कि अपने लिए तो सब चाहते हैं कि दूसरे उसकी इज़्ज़त करें और सारी दुनिया सर के बल खड़ी हो जाए मगर जिनकी वजह से यह इज़्ज़त मिली है उनके लिए कोई खड़ा नहीं होना चाहता। इसका मतलब यह है कि इबादत को बस निशाना बनाया गया है, मामला कुछ और है। इस से भी अगला ख़तरनाक मोड़ है ''अल्लाह से मदद मांगना''।

> हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझ से ही मदद मांगते हैं।[2]

इन लोगों का यह भी मानना है कि अगर किसी ने आपसे कुछ मांग लिया तो वह ''हम तुझ से ही मदद मांगते हैं'' के मुक़ाबले में आ गया है यानी तौहीद से बाहर निकल कर शिर्क में चला गया है।

यह वह सोच है जो कुछ लोगों के दिमाग़ों में पाई जाती है।

आइए! पहले आदमी को देखते हैं कि आदमी है क्या? और बनाने वाले ने इसे कैसे बनाया है?

आदमी को बनाने के बाद जब अल्लाह ने उसकी असलियत का एलान किया तो साफ़-साफ़ कहा कि ऐ इन्सान! तेरे पास घमंड करने के लिए कुछ भी नहीं है। तुझे बड़ा कमज़ोर बनाया गया है। यह क़ुरआन का एलान है। अगर क़ुरआन ने यह बात न कही होती तब भी अगर आदमी अंधा नहीं है तो हर जन्म लेने वाले को देख लेगा और उसे अपने आप पता चल जाएगा

---

[1] किसी को अल्लाह का शरीक व साथी बनाना

[2] सूरए हम्द/5

कि पैदा जन्म लेने वाला कमज़ोर पैदा हुआ है या ताक़त वाला। सामने की बात है कि हर पैदा होने वाला ताक़त के हिसाब से कमज़ोर, इल्म के हिसाब से कमज़ोर, समझ के हिसाब से कमज़ोर, कमाल के हिसाब से कमज़ोर यानी हर हिसाब से कमज़ोर पैदा होता है। यहाँ तक कि उसके पास आँखें तो होती हैं मगर देख नहीं सकतीं, कान तो होते हैं मगर सुन नहीं सकते, पैर तो होते हैं लेकिन आदमी चल नहीं सकता, हाथ तो होते हैं मगर उठ नहीं सकते और दिमाग़ भी होता है मगर कुछ सोच नहीं सकता। भला आदमी और कितना कमज़ोर होगा?

अगर अल्लाह चाहता तो आदमी को इतनी ताक़त वाला बनाकर भेज सकता था कि वह सब के सामने अकड़ कर खड़ा हो जाता और उसे किसी से मदद मांगने की ज़रूरत ही न होती मगर बनाया तो इतना कमज़ोर है कि किसी ताक़त वाले के सहारे के बिना आगे बढ़ नहीं सकता। जब हर आदमी इस दुनिया में कमज़ोर बनाकर भेजा गया है तो वह किसी न किसी का सहारा तो बहरहाल लेगा तो क्या हर सहारा शिर्क हो जाएगा? अगर कोई भी मदद मांगना शिर्क है तो यह कहना चाहिए कि आदमी को इसीलिए बनाया गया है कि न वह मुसलमान बनने पाए और न मोमिन यानी सब मुशरिक[1] बन जाएं क्योंकि आदमी बिना सहारे के आगे बढ़ ही नहीं सकता और फिर जब अल्लाह ने आदमी को दुनिया में भेजा तो इस तरह से उसकी कमज़ोरी की वजह से उसे किसी जंगल में नहीं उतारा, आसमान से नीचे नहीं उतारा, ज़मीन से पेड़ों की तरह नहीं उगाया बल्कि माँ-बाप से मिला कर बनाया ताकि सहारा देने वाले भी साथ में रहें। अब आदमी एक क़दम भी आगे बढ़ना चाहता है तो कभी माँ का सहारा चाहता है, कभी बाप का सहारा। इसके बिना तो आगे बढ़ ही नहीं सकता। साथ ही उसे नेचर ने यह भी सिखा दिया है कि अगर बिना सहारे के आगे नहीं बढ़ सकते तो सहारा कैसे लिया जाए। आदमी इतना ही कमज़ोर इस दुनिया में आता है कि उसे ताक़त वालों की गोद में रख दिया जाता है। अब अगर इन ताक़त वालों से मदद लेना है तो मदद लेने का

---

[1] किसी को अल्लाह का साथी बनाने वाला

तरीक़ा क्या होगा? कभी किसी ने किसी बच्चे को अपनी माँ की गोद में कहते हुए नहीं सुना होगा या किसी बच्चे को कोई लेटर टाइप करते नहीं देखा होगा कि मुझे अब दूध चाहिए या अब मुझे बाहर से वह सामान चाहिए। बाप गए और दौड़कर ले आए। दूध पीता बच्चा भी जानता है कि जीना है तो अपनी माँ से मदद लेना ही पड़ेगी। अल्लाह ने एक ज़बान दे दी है कि जब भी कुछ चाहिए फ़ौरन रोना शुरू कर दिया, जब भी भूख या प्यास लगी फ़ौरन रोना शुरू कर दिया और माँ समझ गई यानी नेचर ने दोनों बातें सिखा दी हैं: बिना सहारे के जी नहीं सकते और सहारा लेने का सब से अच्छा रास्ता है रोना।

इसीलिए हदीसों में मिलता है कि सब से अच्छी नमाज़, सब से अच्छी इबादत और सब से अच्छी बन्दगी वह है कि जहाँ मुसल्ले पर खड़े होने वाले की आँख से आँसू की एक बूँद टपक जाए। अगर आँखों में आँसू आ जाएं तो इससे अच्छी कोई नमाज़ और कोई बन्दगी नहीं है। आँसुओं के साथ दो रकअत नमाज़ उन हज़ार रकअत नमाज़ों से कहीं बढ़कर है जो बिना आँसुओं के पढ़ ली जाएं क्योंकि उस दो रकअत में "हम तुझ से ही मदद चाहते हैं" करके दिखाया जाता है और दूसरी वाली नमाज़ों में बस ज़बान से कहा जाता है।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैं:

> अगर अल्लाह से कुछ मांगना चाहते हो तो यह बात याद रखना कि मोमिन का हथियार दुआ है। न दुआ से बड़ी कोई पूँजी है और न दुआ से बड़ा कोई हथियार है।

आदमी मोहताज भी है और मजबूर भी जिसकी वजह से उसे किसी न किसी का सहारा लेना ही पड़ेगा। हर सहारा लेने का नाम न कुफ़्र[1] होता है और न शिर्क और न ही यह तौहीद के मुक़ाबले में है।

अल्लाह ने आदमी को ऐसा ही बनाया है मगर अजीब सी बात यह है कि जब बच्चा माँ की गोद में पल रहा होता है तो

---

[1] अल्लाह को न मानना

अगर उसके पास चार औरतें बैठी हुई हों और उस बच्चे को भूख लगे यानी उसे दूध चाहिए तो वह फ़ौरन अपनी माँ की तरफ़ मुड़ता है जबकि उसके लिए चारों औरतें दिखने में एक जैसी, शक्लों में एक जैसी और कपड़ें में एक जैसी ही होती हैं। इसीलिए हम यह भी देखते हैं कि जब बच्चा परेशान होता है तो कोई लाख बुलाता रहे मगर वह दौड़कर अपनी माँ के पास ही जाता है यानी जिसे उसका सहारा बनाया गया है वह उसको ख़ूब पहचानता है।

यह है आदमी कि जब तक बच्चा था, नासमझ और कमज़ोर था और तब तक अच्छी तरह से यह बात जानता था कि कौन अपना है और कौन पराया, किसका सहारा लेना चाहिए और किसका नहीं लेना चाहिए लेकिन जैसे ही बड़ा हुआ और समझ आई तो वह सब कुछ भूल गया जो बचपन में याद था। उस वक़्त सब हमदर्दी से हाथ बढ़ाते थे मगर बच्चा किसी की भी गोद में नहीं जाता था, बस अपनी माँ की गोद में जाता था क्योंकि अल्लाह ने उसका सहारा उसकी माँ को ही बनाया है?

जब पहले ही दिन यह बात समझ ली थी तो उसी को सहारा बनाना चाहिए था जिसको अल्लाह ने सहारा बनाया है। आगे चलकर किसने बहका दिया? कभी इनकी चौखट पर और कभी उनके दरवाज़े पर, वहाँ क्यों नहीं जाते जिसको उसने सहारा बनाया है?

यह नेचुरल सी बात है कि जो कमज़ोर है वह हर हाल में मदद चाहे और जो कमज़ोर है वह हर हाल में ताक़त वाले का सहारा लेगा। यह एक ऐसी बात है जिसको कोई ठुकरा ही नहीं सकता। अगर बात ख़ाली मांगने की आ जाए तो क़ुरआन में साफ़-साफ़ लिखा हुआ हैः

हम तुझ से ही मदद चाहते हैं।

अब सब से पहले हमें सूरए हम्द की इस आयत का मतलब समझना होगा कि आयत कौन सी और कैसी मदद की बात कर रही है।

क़ुरआन में यह भी लिखा हुआ हैः

> अगर तुम अल्लाह की मदद करोगे तो वह तुम्हारी मदद करेगा।[1]

अल्लाह अगर कमज़ोर होकर मदद मांगता तो कभी न कहता कि तुम मेरी मदद करो, मैं तुम्हारी मदद करूँगा। ''अल्लाह भी तुम्हारी मदद करेगा'' कहना इस बात का सुबूत है कि अल्लाह कमज़ोर नहीं है क्योंकि अगर कमज़ोर होकर मदद मांगता तो फिर वह कैसे मदद करता? अगर एक लाख आदमी मिलकर अल्लाह की मदद करेंगे तो वह अकेला ही लाखों के लिए काफ़ी है लेकिन फिर भी कहता है कि मेरी मदद करो।

क़ुरआन में दो ही जगहें ऐसी हैं जहाँ अल्लाह ने अपने बन्दों से कुछ मांगा है वरना हर जगह बस दिया ही है। एक यही ऊपर वाली आयत है जिसमें अल्लाह ने कहा है कि अगर तुम अल्लाह की मदद करोगे तो वह भी तुम्हारी मदद करेगा।

दूसरी आयत यह है:

> अल्लाह को क़र्ज़ा दो।[2]

अपनी जगह यह बात बिल्कुल सही है कि अल्लाह क़र्ज़ा लेकर वापस कर देगा बल्कि एक के दस बनाकर देगा, सत्तर बनाकर देगा या हज़ार बनाकर देगा मगर अल्लाह ने ही कहा कि मुझे क़र्ज़ा दो।

इन दोनों आयतों में दो चीज़ें मांगी गई हैं: एक मदद और दूसरी कर्ज़ा। मदद मांगी तो कहा कि अगर मेरी मदद करोगे तो मैं भी तुम्हारी मदद करूँगा ताकि तुम मुझे कमज़ोर न समझ लो और जब कहा कहा कि कर्ज़ा दो तो कहा कि कर्ज़ा दो मगर हम जब वापस करेंगे तो बढ़ाकर वापस करेंगे ताकि तुम हमें फ़क़ीर न समझ लो।

जब अल्लाह दे सकता है तो मदद भी कर सकता है, फिर कमज़ोरों से मांगने की क्या ज़रूरत है?

दूसरी हर चीज़ का मांगना कमज़ोरी की निशानी हो सकती है मगर न मदद मांगना कमज़ोरी की निशानी है और न कर्ज़ा

---

[1] सूरए मोहम्मद/7
[2] सूरए हदीद/18

मांगना क्योंकि यह दोनों काम अल्लाह ने अपने आप से जोड़ दिए हैं।

सब जानते हैं कि अगर अल्लाह ने कहा है कि मेरे दीन की मदद करो तो इसका मतलब यह नहीं है कि अल्लाह मोहताज है। अगर अल्लाह कहता है कि मुझे क़र्ज़ा दो तो इसका भी यह मतलब नहीं है कि वह मोहताज है। असल में वह तो अपने बन्दों का इम्तेहान लेना चाहता है मगर उसने कहा यही है कि मुझे क़र्ज़ा दो या मेरी मदद करो।

किसी से मदद मांगने के तीन तरीक़े होते हैंः

एक तरीक़ा तो यह है कि आदमी अल्लाह को छोड़कर किसी बन्दे के सामने अपने हाथ फैला दे और यह सोचकर फैलाए कि चूँकि अल्लाह नहीं दे रहा है इसलिए अब उसके बन्दे से मांगना चाहिए। इस सोच की इस्लाम में कोई जगह नहीं है। अगर कोई अल्लाह को छोड़कर बन्दे से मांगे कि अल्लाह नहीं दे रहा है या नहीं दे सकता तो यह सब से बुरा कुफ़्र है। यह भी ध्यान रहे कि यह शिर्क नहीं है बल्कि खुला कुफ़्र है क्योंकि शिर्क में तो दो होते हैं और यहाँ तो बस एक ही है और वह भी उसका बन्दा। शिर्क वहाँ होता है जहाँ आदमी दो ख़ुदाओं को मानता है। ऐसा आदमी तो असली ख़ुदा को छोड़ ही आया है और उसके पास चला गया है जो ज़मीन पर टहल रहा है और चार पैसे जेब में रखे हुए है यानी जब आदमी अल्लाह को छोड़कर किसी बन्दे के आगे हाथ फैला दे तो यह सब से बड़ा कुफ़्र है। हर समाज में बल्कि मुसलमान समाज में भी ऐसे नासमझ लोग मिल जाते हैं जो कह बैठते हैं कि अल्लाह तो कुछ कर नहीं रहा है, आप ही कुछ कर दीजिए। सवाल यह है कि जब अल्लाह नहीं करता तो यह आदमी कैसे कर देगा जबकि जीना-मरना भी अल्लाह के हाथ में है। उधर जिसके आगे हाथ फैलाया था उसने अभी सोचा ही था कि कुछ किया जाए मगर उसी पल अल्लाह ने मौत के फ़रिश्ते को भेज दिया कि अब बताओ! क्या करोगे? मौत का फ़रिश्ता आया और दोनों को अपने साथ ले गया। अगर तुम्हें लगता है कि यही आदमी कुछ करेगा तो फिर ठीक है, दोनों चले आओ। देखते हैं कि यह क्या करता है। दुनिया में ऐसे बहुत

सारे लोग दिख जाएंगे। जैसे अगर किसी घर में दो-चार महीने कोई बीमारी रह जाए तो बस घर वाले यह जानने के लिए निकल पड़ते हैं कि कौन इस बीमारी को घर से निकाल सकता है क्योंकि घर में सब को शक हो जाता है कि ''कुछ'' हो गया है। इसी ''कुछ'' की वजह से घर के घर बर्बाद हो जाते हैं। सारी मुसीबतों की जड़ यह दो चीज़ें हैं। जहाँ किसी घर, ख़ानदान या मोहल्ले में कोई मुसीबत आई तो हर एक कहने लगता है कि ''कुछ'' हो गया है। अगर दो-चार या दस जगह इंटरव्यु देने के बाद कहीं नौकरी न मिले, किसी की शादी न हो रही हो या किसी के यहाँ बच्चा न हो रहा हो तो हर एक कहने लगता है कि आपके घर में 'कुछ' है। यह बर्बादी की पहली सीढ़ी है और जैसे ही 'कुछ' होने का यक़ीन हुआ वैसे ही किसी दूसरे ने उसमें अपना 'कुछ' भी मिला दिया। इसका मतलब यह लिया जाता है कि किसी ने ''कुछ'' करा दिया है। कुछ उन्होंने जोड़ा था और कुछ किसी दूसरे ने उसमें जोड़ दिया। हो गए घरों में झगड़े और लड़ाईयाँ शुरू। सास-बहू के बहुत सारे झगड़े भी इसी वजह से होते हैं। मोहल्ले की कोई औरत समझाने के लिए आई है और कह रही है कि देखिए! पहले आपका लड़का हर दिन फ़ोन किया करता था, सारे पैसे आपके पास भेज दिया करता था, घर का क्या नक़्शा था मगर अब आपके लड़के को ''कुछ'' हो गया है क्योंकि अब आधे पैसे भेजता है, अब आठवें दिन फ़ोन करता है और कभी तो आठवाँ दिन भी बीत जाता है मगर पलटकर पूछता भी नहीं है। उधर से दूसरी औरत बोली कि हाँ! अगर कोई शैतान की माँ है तो कोई उसकी ख़ाला भी होगी। उधर से वह बोलीं कि अरे कुछ हो गया है, किसी ने कुछ करा दिया है। अब यह ''किसी'' कौन है? वह बहु जिसे कल बड़ी इज़्ज़त और मोहब्बत से लाया गया था कि घर में आ जाए तो उसे ज़मीन पर उतरने न दिया जाए मगर आज यह हाल है कि अगर वह आ जाए तो उसे घर ही में न घुसने दिया जाए क्योंकि उसने कुछ करा दिया है। अब इस सास को कौन समझाए कि किसी ने कुछ नहीं कराया है बल्कि आप ही ने कुछ करा दिया है। अगर आपका बच्चा शरीफ़ है और आपने उसकी शादी करा दी है तो

अब उसकी ड्युटी है कि अपनी दोनों ज़िम्मेदारियों को पहचाने। आप माँ है अपनी जगह पर लेकिन जिसके साथ शादी की है आपके बेटे के ऊपर उसकी भी ज़िम्मेदारी है। अब भला सारा पैसा आपको कैसे दिया जा सकता है? ख़ुद इस्लाम ने उसके ऊपर वाजिब कर दिया है कि अपनी बीवी का नफ़्क़ा (ख़र्चा) उठाओ। बच्चों को माँ-बाप की ज़िम्मेदारी तो ख़ाली अल्लाह ने दी है। ख़ुद बच्चे अपने माँ-बाप से कोई एग्रीमेंट नहीं करते हैं। इसीलिए अगर बच्चे अच्छे होते हैं तो अल्लाह के इस हुक्म को पूरा करते हैं और अगर कहीं ख़राब निकल गए तो माँ-बाप की तरफ़ पलट कर भी नहीं देखते। मगर बीवी के साथ मामला दूसरा है। अल्लाह का हुक्म भी है और उसके साथ समाजी एग्रीमेंट भी है यानी माँ-बाप के नफ़्क़े के लिए बस अल्लाह का हुक्म है, बन्दों का कोई एग्रीमेंट नहीं है मगर बीवी के नफ़्क़े में अल्लाह के हुक्म के साथ-साथ बन्दे का एग्रीमेंट भी है। इसलिए अब माँ को भी यह बात समझना चाहिए कि जब शादी की है तो जो भी आमदनी होगी उसी में माँ और बीवी दोनों का ख़र्चा पूरा होगा। यह अल्लाह का क़ानून है कि अब कुछ वक़्त माँ-बाप को मिलेगा और कुछ वक़्त बीवी को जिसके साथ एग्रीमेंट भी किया है। जब ऐसा है तो फिर "कुछ" बीच में कहाँ से आ गया। यह तो होना ही था कि अब हालात पहले जैसे नहीं रहेंगे।

बहरहाल जैसे ही पता चला कि "कुछ" हो गया है वैसे ही नमाज़ें और दुआएं शुरू हो गईं लेकिन जब इससे भी कुछ नहीं हुआ तो किसी ने बता दिया कि वह जो नाले के पास सड़क पर एक साहब बैठे रहते हैं वह बहुत पहुँचे हुए हैं। उनके पास चली जाओ, वह तुम्हारा मामला हल कर देंगे। मुसलमान औरत ने चादर संभाली, मुसलमान आदमी ने अपना सामान उठाया और जाकर उन साहब के पास खड़े हो गए। हमारा अल्लाह तो कुछ नहीं करता, आप अल्लाह के दुश्मन हैं, पत्थरों की पूजा करते हैं, पेड़ों के सामने अपना सर झुकाते हैं, हम जानते सब हैं मगर यह भी पता है कि अब हमारे काम बस आप ही आ सकते हैं।

अल्लाह बुरा करे ऐसे मुसलमान का जो क़ुरआन को बेकार समझे, अल्लाह के रसूल[स०] को ग़लत समझे, मासूम इमामों की

दुआओं को बेकार समझे और अल्लाह के दुश्मन के सामने जाकर हाथ फैला दे।

इस्लाम किसी भी तरह इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं है कि आदमी अल्लाह को छोड़कर किसी दूसरे के सामने हाथ फैला दे। यह थी पहली बात।

मांगने का दूसरा तरीक़ा यह है कि कोई आदमी किसी दूसरे आदमी के बारे में सोच ले कि मेरा यह मामला बस दो ही हल कर सकते हैंः या तो अल्लाह या वह आदमी। यह भी शिर्क है। अल्लाह के मुक़ाबले में कोई नहीं है, न वह न यह। अल्लाह के सामने कोई नहीं है जिसके बारे में कहा जा सके कि या अल्लाह या आप। यहाँ ‘‘या’’ नहीं है। अल्लाह में तौहीद है और तौहीद यानी अल्लाह एक है। उसके यहाँ ‘‘या’’ नहीं होता। अगर किसी को पता नहीं है तो उसे पता होना चाहिए कि कि तौहीद यानी अल्लाह बस एक है। तौहीद में ‘‘या’’ की कोई जगह नहीं है।

अल्लाह के सामने हम सब मोहताज हैं, कमज़ोर हैं और फ़क़ीर भी। अब अगर हम अल्लाह के सामने हाथ फैलाते हैं तो यह न कोई बड़ा काम है और न कोई कमाल। जब है ही नहीं तो और क्या करेंगे? चाहें उनसे मांगें या इन से या अल्लाह से, कहीं न कहीं तो मांगेंगे ही।

जिस आदमी को अल्लाह ने ज़मीन से लेकर आसमान तक और दुनिया से लेकर मरने के बाद तक सब कुछ दिया है वह क्यों नमाज़ें पढ़ रहा है? वह क्यों दुआएं मांग रहा है? उसे भी तो कोई समझाए कि आप यह क्या कर रहे हैं। जवाब यही मिलेगा कि बात मांगने की नहीं है बल्कि मैं हर देखने वाले को यह बताना चाहता हूं कि मेरे पास जो कुछ है वह सब का सब अल्लाह का दिया हुआ है। ख़बरदार! मुझे कोई अल्लाह के साथ ‘‘या’’ न बनाए। अगर ‘‘या ख़ुदा या मैं’’ वाला मामला होता तो मैं भी अल्लाह के मुक़ाबले में अकड़कर बैठ जाता मगर मैं तो हमेशा सजदे करता हूं और हमेशा उसके आगे हाथ फैलाए रहता हूं।

इसका मतलब यह हुआ कि अल्लाह के साथ कोई ''या'' नहीं है। अल्लाह है और बस अल्लाह है। अगर कोई अल्लाह के साथ किसी दूसरे को जोड़ता है तो यह भी शिर्क है।

मांगने का तीसरा तरीक़ा यह है कि किसी से इस वजह से मांगा जाए कि अल्लाह ने उसे दे रखा है। अल्लाह को छोड़कर या अल्लाह के मुक़ाबले में नहीं बल्कि इसलिए क्योंकि अल्लाह ने उसे दे रखा है। अगर ऐसे आदमी से मांगा जाए तो यह ईमान की निशानी है। इसमें न किसी तरह का कुफ़्र है और न किसी तरह का शिर्क। न यह अक़ीदे की ख़राबी है और न कमज़ोरी बल्कि यह पूरे का पूरा ईमान है। यह वही बात है जो बच्चे की मिसाल में हम ने देखी थी कि बच्चा इसलिए अपनी माँ की गोद में जाता है क्योंकि अल्लाह ने ही उसकी रोज़ी-रोटी उसकी माँ के पास रखी है। बच्चा अपनी माँ के पास इसलिए नहीं गया कि वह अपनी माँ को दूसरा ख़ुदा समझता है बल्कि इसलिए जाता है क्योंकि अल्लाह ने उसकी माँ को दिया है और उसे नहीं दिया है। इस तरह बच्चे का अपनी माँ से मांगना असल में अल्लाह से ही मांगना है। वरना अगर अल्लाह ने उसकी माँ के पास उसकी रोज़ी-रोटी न रखी होती तो वह अपनी माँ को मुड़कर भी न देखता। सारी दुनिया का कारोबार इसी फ़ार्मूले पर चल रहा है।

आदमी किसी के यहाँ नौकरी इसी लिए करता है क्योंकि उसे वहाँ से पैसा मिलता है जैसे दो हज़ार दिरहम। अब कोई कहे कि आपको शर्म नहीं आती? क्या अल्लाह दो हज़ार दिरहम भी नहीं दे सकता? दरवाज़ों पर फ़क़ीर क्यों आते हैं? इसी लिए आते हैं क्योंकि वह जानते हैं कि दूसरों के पास है और उनके पास नहीं है और जो दूसरों के पास है भी वह भी उनका नहीं है बल्कि अल्लाह का दिया हुआ है।

अब तक की बात का निचोड़ यह है कि अगर कोई अल्लाह के मुक़ाबले में किसी से मांगेगा तो यह शिर्क हो जाएगा लेकिन अगर अल्लाह के दिए हुए में से मांगेगा तो फिर यह शिर्क नहीं है और सारी दुनिया इसी पर चल रही है। यहाँ तक कि नबियों और रसूलों का इतिहास भी फ़ार्मूले पर चलता रहा है। अल्लाह ने हज़रत मूसा[अ०] को नबी बनाया था, उन्हें दरियाओं में बचाया

था, उन्हें बादशाह फ़िरऔन से बचाया था और जब अल्लाह ने कहा कि ऐ मूसा! अब जाओ! जाकर फ़िरऔन को मेरा मैसेज सुनाओ तो हज़रत मूसा[अ०] ने यही कहा था कि ऐ अल्लाह! किसी को मेरे साथ कर दे। हज़रत मूसा[अ०] को अल्लाह पर भरोसा करके चले जाना चाहिए था लेकिन उन्होंने कहा कि मेरा एक मदद करने वाला भी होना चाहिए जो मेरे काम में मेरी मदद करे। हज़रत मूसा[अ०] तो इतने बड़े नबी हैं, भला उन्हें किसी साथी की क्या ज़रूरत है? उनका जवाब यही मिलेगा कि मैं अल्लाह के मुक़ाबले में किसी साथी की बात नहीं कर रहा हूँ बल्कि मैं तो अल्लाह की दी हुई ताक़त के सहारे किसी को अपना साथी बनाना चाहता हूँ और अल्लाह की दी हुई ताक़त के सहारे किसी को साथी बनाना न कुफ़्र है और न शिर्क। अल्लाह ने हज़रत मूसा[अ०] को हज़रत हारून[अ०] जैसा साथी देकर कहा कि अब जाओ और जाकर उसे मेरा मैसेज सुना दो।

इसी तरह जब हज़रत ज़ुलक़रनैन[अ०] आए तो लोगों ने कहा कि याजूज-माजूज बहुत तंग कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि कोई बात नहीं। तुम मेरी मदद करो। हम सब मिलकर एक ऐसा बांध बनाएंगे कि फिर दुश्मन नहीं आ पाएगा। यहाँ भी अल्लाह का नबी कह रहा है कि मेरी मदद करो। हज़रत ज़ुलक़रनैन[अ०] को तो अल्लाह से मदद मांगना चाहिए थी मगर उन्होंने ऐसा नहीं किया क्योंकि उन लोगों के पास अल्लाह की दी हुई ताक़त ही थी। इसी लिए कहा था कि आओ! मेरी मदद करो!

हर नबी ने ऐसा ही किया है। यहाँ तक कि अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] ने भी जब इस्लाम को फैलाना शुरू किया तो अपनी पहली दावत में यही कहा था कि कौन है जो मेरा बोझ बटाएगा? किसी ने आज तक अल्लाह के रसूल[स०] से नहीं पूछा कि आप बोझ बंटाने वाला क्यों ढूँढ रहे हैं? आपके पास तो बोझ बंटाने वाला पहले से ही है मगर रसूल[स०] कह रहे हैं कि कौन है जो मेरा बोझ बंटाए? इसका मतलब यह है कि मदद करने वालों का साथ लेने से न आदमी के नेचर से कोई टकराव होता है और न क़ुरआन व हदीस से। यही दूसरे नबियों ने किया है और यही अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] ने भी किया है।

अगर कोई यह फ़ार्मूला छोड़ देगा तो वह किसके साथ जाएगा? उसका ईमान कैसा होगा?

अल्लाह की दी हुई ताक़त के बल पर किसी का भी सहारा लेना कहीं से कहीं तक न कुफ़्र है और न शिर्क। यह एक इस्लामी मामला है। इसी वजह से अल्लाह ने भी क़ुरआन में एलान कर दिया है कि अगर तुम मेरी मदद करोगे तो मैं तुम्हारी मदद करूँगा। हम ने तुम को ताक़त और माल दिया है इसलिए अब तुम हमें कर्ज़ा दो। यह सब हम ने ही तुम्हें दिया था इसलिए अब हमें दो। हम ने तुम्हारे हाथों में ताक़त दी है इसलिए हमारे दीन की मदद करो। ताक़त अल्लाह की ही दी हुई है इसी लिए तो वह मदद मांग रहा है। अल्लाह के मुक़ाबले में कुछ भी नहीं है। सब कुछ उसी का दिया हुआ है।

अल्लाह के रसूल[स०] के सामने हाथ फैलाने वाला कोई भी आदमी ऐसा नहीं है जो यह समझ कर मांगता हो कि यह दूसरे ख़ुदा हैं। मुसलमान तो हर नमाज़ में एलान करता है कि मोहम्मद[स०] अल्लाह के रसूल और उसके बन्दे हैं। जब यह अल्लाह के बन्दे हैं तो दूसरे ख़ुदा कैसे हो सकते हैं?

यहाँ तक कि हज़रत अली[अ०] ने भी कहा है कि मैं मोहम्मद[स०] के ग़ुलामों में से एक ग़ुलाम हूँ। अब इसके बाद तो किसी को नहीं कहना चाहिए कि यह दूसरे ख़ुदा हैं।

ऐसा नहीं है कि किसी के सामने हाथ फैलाने वाला हर आदमी यह समझकर हाथ फैलाता हो कि सामने वाला ख़ुदा है बल्कि वह बस इसलिए हाथ फैलाता है क्योंकि वह यह मानता है कि उसके पास अल्लाह का दिया हुआ कुछ है और मेरे पास नहीं है। जिस दिन किसी के भी दिल में यह बात आ जाएगी कि वह अल्लाह का मोहताज नहीं है उसी दिन से वह न बन्दा रह जाएगा और न मुसलमान। अब यह एक अलग मामला है कि अल्लाह ने किसी को दिया है और किसी को नहीं दिया है। अल्लाह ने सब कुछ हमारी जेब में ही क्यों नहीं रख दिया तो इसका जवाब बहुत पुराना है कि हर एक को नाख़ून नहीं दिए जाते। देने वाला इतना भी जानता है कि किसे देना चाहिए और किसे नहीं देना चाहिए।

अल्लाह ने जितना कंट्रोल अपने रसूल[स०] को दिया है अगर कहीं हम लोगों को दे दिया होता तो हम में हर एक जिस आफ़िस में भी काम करता वहाँ उसकी बस यह कोशिश होती कि उसके सारे घर वालों को वहीं नौकरी मिल जाए, जिस कारख़ाने में भी होते वहाँ हर एक की बस यही कोशिश होती कि अपने शहर के सब आ जाएं और बाहर वाला कोई न आ पाए। दुनिया की इन छोटी-छोटी सी चीज़ों में हम इतना गिर जाते हैं कि हर एक को बस अपना ही अपना दिखता है और कोई नहीं दिखता। इतना ही नहीं बल्कि अगर अपने वालों में से भी कोई अपने बराबर आने लगे तो जिसे हम ने कल उठाया था उसी को गिराने में लग जाते हैं कि यह क्या बात हुई कि गाँव वाले इन्हें भी सलाम करते हैं और हमें भी सलाम करते हैं। ग़लती हो गई जो इन्हें नौकरी दिलवा दी। इसलिए इन्हें हटवाओ ताकि लोग बस हमें सलाम करें। जब दुनिया के चार पैसे और दूसरी छोटी-छोटी चीज़ों में हमारा यह हाल है तो अगर कहीं अल्लाह ने जन्नत भी हमारे हाथ में रख दी होती तो फिर जन्नत कोई शहर या गाँव न होता बल्कि आज की बोली में कोई कालोनी होती जिसमें यह होता कि बस अपने घराने वाले होते, उस शहर वाले होते, उस मोहल्ले वाले होते या उस मुल्क वाले होते। यहीं से पता चल जाता है कि हम क्या हैं क्योंकि थोड़ा सा देकर ही अल्लाह ने हमारा इम्तेहान ले लिया। जब इतने में ही हमारा यह हाल है तो अगर और मिल जाता तो क्या होता?

इसके उलट जिन पर अल्लाह को भरोसा है उनके हाथ में जन्नत-जहन्नम दे दिया है और यह समझकर दिया है कि यह भेदभाव नहीं करेंगे। यह लोगों का ईमान और कैरेक्टर देखकर उन्हें जन्नत या जहन्नम में भेजेंगे। जो अपने भरोसे को साबित कर देता है कंट्रोल भी उसी के हाथ में दिया जाता है।

अगर आदमी दिल से ईमान वाला है तो वह अल्लाह को अच्छी तरह से पहचानता है। वह जानता है कि अल्लाह ने किसी को अपना रसूल या अपना इमाम क्यों बनाया है और पूरी तरह से अल्लाह के रसूल और इमाम को मानता भी है।

(9)

अल्लाह पर भरोसा

क़ुरआने करीम ने बार-बार लोगों से कहा है कि अगर तुम सच में अल्लाह के बन्दे हो और अगर तुम दिल से अल्लाह पर ईमान रखते हो तो अल्लाह पर तवक्कुल (भरोसा) करो। अल्लाह पर तुम्हारे ईमान की निशानी तवक्कुल है। अल्लाह के भेजे हुए सारे नबियों ने भी बराबर यही कहा है कि हमारा भरोसा बस अल्लाह के ऊपर है लेकिन दूसरे लोगों में यहाँ कमज़ोरी दिखाई पड़ती है कि नाम अल्लाह का लेते हैं और भरोसा दूसरों पर करते हैं।

सवाल यह है कि आदमी अल्लाह पर भरोसा क्यों नहीं करता और दूसरों पर इतनी आसानी से कैसे कर लेता है? जहाँ तक तवक्कुल यानी भरोसे की बात है तो दुनिया में दो तरह के लोग पाए जाते हैं जो अल्लाह के रास्ते से हटे हुए हैं। कुछ ऐसे लोग हैं जिन्हें अपनी ताक़त पर इतना भरोसा है कि वह समझते हैं कि उन्हें अल्लाह की ज़रूरत ही नहीं है और कुछ ऐसे लोग हैं जो अपनी सोच में अल्लाह पर इतना भरोसा करते हैं कि कुछ काम करने की ज़रूरत ही नहीं समझते। इस दुनिया में दीन से

ऐसे बेगाने भी मिलेंगे जो यह कहते फिरते हैं कि जब हमारे हाथ-पाँव में ताक़त है और जब हम ख़ुद ही कमा-खा सकते हैं तो फिर हमें अल्लाह से मांगने की ज़रूरत ही क्या है? साथ ही ऐसे बहके हुए दीनदार भी मिलेंगे जो यह कहते दिखाई पड़ते हैं कि जब अल्लाह ने हमारी रोज़ी-रोटी का वादा किया है तो फिर हमें कुछ करने की क्या ज़रूरत है? यह लोग भी यह समझते हैं कि इन से बढ़कर अल्लाह पर भरोसा करने वाला कोई नहीं है। पहले वाले लोग अपनी मेहनत, अपनी नौकरियों और अपने कारोबार पर भरोसा करते हैं और यह दूसरे वाले ख़ाली घर में बैठे रहते हैं कि अल्लाह ही देगा।

क्या इस्लाम में तवक्कुल का मतलब यही है कि आदमी अल्लाह पर भरोसा करते हुए सोच ले कि हम कोई काम नहीं करेंगे क्योंकि जिसने रोज़ी-रोटी का वादा किया है वही अपना वादा पूरा करेगा? या इस्लाम ने लोगों को यह सोचने की छूट दे दी है कि अपने ऊपर भरोसा करो, अल्लाह से मांगने की कोई ज़रूरत नहीं है?

सही बात यह है कि यह दोनों बातें ही इस्लाम के हिसाब से ग़लत हैं। न इस्लाम अपने ऊपर इतना भरोसा करना सिखाता है कि आदमी अल्लाह को ही भूल जाए और न यह चाहता है कि आदमी हाथ पर हाथ धर कर बैठ जाए कि जो कुछ करेगा बस अल्लाह ही करेगा।

वह लोग जो अल्लाह पर भरोसा करके सारे काम छोड़ देते हैं और अपने हिसाब से सब से बढ़कर अल्लाह पर भरोसा करते हैं। असल में यह वही लोग हैं जिन्होंने कल अल्लाह को सजदा नहीं किया था और इसका एहसान भी अल्लाह पर ही रख दिया कि हम तो तेरे ऐसे चाहने वाले हैं कि तेरे सिवा किसी को सजदा ही नहीं करते, चाहे तू ही क्यों न सजदे का हुक्म दे रहा हो।

आज तौहीद के बारे में एक नई सोच यह भी बन गई है कि हम अल्लाह के सिवा किसी के सामने नहीं झुकेंगे चाहे अल्लाह ही क्यों न कहे। यह वही तौहीद है जिसका पहला उस्ताद शैतान था। यह सोच शैतान की बनाई हुई है। अल्लाह कह रहा था कि आदम के सामने सजदा करो मगर शैतान ने कहा कि मैं आग से

बना हूँ और यह मिट्टी से बने हैं। इसलिए मैं इन्हें सजदा नहीं करूँगा। जबकि शैतान को इस बात से क्या मतलब कि कौन मिट्टी से बना है और कौन आग से। उसे तो बस अल्लाह की बात सुनना चाहिए थी और उसके हुक्म पर चलते हुए फ़ौरन हज़रत आदम[अ०] को सजदा कर लेना चाहिए था। अल्लाह जहाँ झुकने का हुक्म दे रहा था वहाँ झुक जाना चाहिए था।

शैतान भी यही एलान कर रहा था कि मैं अकेला ऐसा तौहीद का मानने वाला हूँ जिसने किसी के आगे अपना सर नहीं झुकाया है। यहाँ तक कि अल्लाह ने हुक्म दिया फिर भी नहीं झुकाया।

क्या सच में कोई मुसलमान किसी ऐसे आदमी को अल्लाह का बन्दा मन सकता है जो अल्लाह के हुक्म के बाद भी उसके हुक्म पर अपना सर न झुकाए? और फिर यह भी कहे कि मैं तेरा बन्दा हूँ। अल्लाह को ऐसा बन्दा नहीं चाहिए जो उसके हुक्म को ठुकरा दे और उसकी बात न माने। जो अल्लाह के हुक्म को ठुकरा रहा था और उसके हुक्म के बाद भी हज़रत आदम[अ०] को सजदा नहीं कर रहा था वही कह रहा था कि मैं सब से बड़ा तौहीद वाला हूँ। इसी तरह अल्लाह के हुक्म के बाद भी सब कुछ छोड़ कर अपने घर में बैठ जाने वाले काहिल लोग भी अपने आप को अल्लाह पर तवक्कुल करने वाला कहते हैं।

इस्लाम में नमाज़ ही बस एक ऐसा काम है जिसके लिए क़ुरआन ने हुक्म दिया है कि बाज़ारों को छोड़कर मस्जिद में आ जाओ। सारे काम छोड़ो और नमाज़ पढ़ो। अगर सुबह की नमाज़ या ज़ोहर-अस्र और मग़रिब-इशा की नमाज़ घर में पढ़ ली जाए तो नमाज़ तो ठीक रहेगी बस जमाअत की नमाज़ का सवाब कम हो जाएगा मगर एक नमाज़ ऐसी भी है जिसके बारे में इस्लाम का कहना है कि बस जमाअत से ही पढ़ी जा सकती है और वह है जुमे की नमाज़। इसी नमाज़ के बारे में क़ुरआन में आयत उतरी है कि ऐ ईमान वालो! जब जुमे के दिन नमाज़ के लिए बुलाया जाए तो कारोबार छोड़कर नमाज़ पढ़ने के लिए आ जाओ! यही अकेली एक ऐसी नमाज़ है जिसके लिए इस्लाम ने कारोबार छुड़वा दिया, सारे काम छुड़वा दिए, आफ़िस बंद करवा दिए और हुक्म दिया कि चलो नमाज़ पढ़ो। जब यह आयत

उतरी तो समझ में आ गया कि अल्लाह बस तभी तक कारोबार को सही समझता है जब तक नमाज़ बीच में न आ जाए यानी जब तक नमाज़ का वक़्त न आ जाए तब तक अपनी दुकान पर रहो, अपने आफ़िस में रहो और अपने कारोबार में लगे रहो लेकिन जैसे ही नमाज़ के लिए बुलाया जाए तो फ़ौरन सब कुछ छोड़कर अल्लाह की तरफ़ चले आओ।

आगे चलकर क़ुरआन ने यह भी एलान कर दिया कि जब नमाज़ ख़त्म हो जाए तो फिर से ज़मीन पर फैल जाओ और अल्लाह के फ़ज़्ल (करम) को ढूँढो। क़ुरआन हमें यह बताना चाह रहा है कि हम बन्दगी के नाम पर बेकारी नहीं सिखाना चाहते हैं या हम सजदों के नाम पर तुम्हें काहिल नहीं बनाना चाहते हैं। सजदे का वक़्त आ गया सब कुछ छोड़कर नमाज़ के लिए आ जाओ लेकिन नमाज़ ख़त्म हो जाए तो फिर से अपने कामों में लग जाओ यानी अल्लाह कारोबार के बिना किसी की बन्दगी को नहीं मानता है। इसका मतलब यह है कि इस्लाम में न वह कारोबार, कारोबार है जिसमें अल्लाह की बन्दगी छूट जाए और न वह बन्दगी, बन्दगी है जिसमें कारोबार छूट जाए।

अगर आदमी बीच का रास्ता निकाल ले तो वह अल्लाह पर तवक्कुल वाला रास्ता है कि काम करते जाओ और अल्लाह पर भरोसा करते जाओ।

मुसलमान या तो क़ुरआन पढ़ते नहीं है और अगर पढ़ते हैं तो समझते नहीं है। अगर सच में लोग क़ुरआन को पढ़ते और समझते होते तो देखते कि एक ही आयत में अल्लाह ने कितने मामलों को हल कर दिया है क्योंकि जब नमाज़ के लिए बुलाया तो कहा कि कारोबार को छोड़कर नमाज़ के लिए आ जाओ और जब नमाज़ ख़त्म हो गई तो यह नहीं कहा कि अपने-अपने कारोबार में लग जाओ, दुकान पर बैठ जाओ या आफ़िस खोल लो बल्कि कहा कि जाओ! अब अल्लाह का फ़ज़्ल तलाश करो यानी नमाज़ के लिए आने से पहले इसी चीज़ का नाम कारोबार था मगर अब नमाज़ के बाद उसी का नाम अल्लाह का फ़ज़्ल व करम हो गया।

पहले कारोबार था मगर बाद में अल्लाह का फ़ज़्ल हो गया क्योंकि भला मालिक से अच्छा अपने बन्दों को कौन जान सकता है। वह जानता है कि जब मेरा बन्दा मेरे कहने के बाद अपना कारोबार छोड़कर नमाज़ के लिए चलेगा तो वह भी साथ-साथ चलेगा जिसका नाम शैतान है जो लोगों के दिलों में शक डालता फिरता है। लोग नमाज़ पढ़ने के लिए आएंगे और वह दिल में शक डालना शुरू कर देगा कि अरे! तुम्हें यह भी तो सोचना चाहिए कि सारे बाज़ार इसी वक़्त बंद हुए हैं। कितने लोग ऐसे हैं जो नमाज़ पढ़ते ही नहीं हैं। वह सोचते हैं कि यही सब से अच्छा वक़्त है क्योंकि बीच में घंटा भर की छुट्टी हुई है। चलकर सामान ख़रीद लेते हैं। दुकान खोलने का यही सब से अच्छा वक़्त था क्योंकि दूसरे सब लोग तो नमाज़ पढ़ने के लिए चले गए हैं अगर इस वक़्त दुकान खोल ली तो बहुत फ़ाएदा होगा। अब जब लोग ख़रीदारी करने आएंगे और तुम्हारी दुकान खुली हुई होगी तो सारे ग्राहक तुम्हारे पास ही आंएगे। तुम्हारी दो रकअत नमाज़ से सारे ग्राहक हाथ से निकल जाएंगे।

शैतान का यही काम है। कभी समझाता है कि तुम्हारी दो रकअत की नमाज़ से सैकड़ों, हज़ारों या लाखों का घाटा हो गया और आदमी यह सोच भी नहीं पाता कि छः घंटे से तो बैठे हुए हैं, अभी तक तो हज़ारों में नहीं मिला यानी जितना मिलेगा वह सब का सब इसी आधे-एक घंटे में ही मिलेगा।

आदमी की कमी भी यही है कि अल्लाह लाख समझाए उसकी समझ में कुछ भी नहीं आता मगर शैतान की समझाई हर बात समझ में आ जाती है।

अल्लाह से बढ़कर भला आदमी को कौन समझता है? इसीलिए उसने पलट कर यह नहीं कहा कि जाओ! नमाज़ ख़त्म हो गई, अब कारोबार करो बल्कि कहा कि जाओ! अल्लाह का फ़ज़्ल ढूँढो यानी अब तक तुम कारोबार कर रहे थे मगर अब अल्लाह का फ़ज़्ल तुम्हारे हाथ में आ जाएगा। अल्लाह ने न रोज़ी-रोटी कहा, न कारोबार कहा, न कुछ और कहा बल्कि बस यह कहा कि जाओ! अल्लाह का फ़ज़्ल ढूँढो क्योंकि हर काम, हर बिज़नेस और हर कारोबार का फ़ाएदा तय है और लोगों को पता

भी है लेकिन एक अल्लाह का फ़ज़्ल ही ऐसा है जिसके बारे में किसी को कुछ नहीं पता कि कितना मिलेगा। किसी को नहीं पता कि अल्लाह कितना करम करेगा। इसी लिए अल्लाह ने कहा कि नमाज़ ख़त्म हो जाए तो अल्लाह का फ़ज़्ल (करम) ढूँढो यानी शैतान तो बन्दों को समझाएगा ही कि घाटा हो गया लेकिन इसके मुक़ाबले में अगर अल्लाह अपने बन्दे पर करम करने पर आ जाए तो दुनिया का कोई ख़ज़ाना, ख़ज़ाना नहीं रह जाएगा।

इस तरह आदमी कभी यूँ बहक जाता है कि अल्लाह के बजाए अपने ही ऊपर पूरा भरोसा कर लेता है और कभी यूँ बहक जाता है कि अपने हिसाब से अल्लाह पर इतना भरोसा कर लेता है कि हाथ पर हाथ धरे घर मे बैठ जाता है कि जो कुछ करेगा अल्लाह ही करेगा। यह लोग वही तौहीद वाले हैं कि अगर अल्लाह भी कहे तो हज़रत आदम[अ०] को सजदा नहीं करेंगे। जबकि यह कहीं से कहीं तक तौहीद नहीं है। तौहीद यह है कि जहाँ अल्लाह कह दे वहाँ अपना सर झुका दो। तौहीद का मतलब ही यह है कि बन्दा अल्लाह के क़ानून का पाबंद हो जाए और उसकी अपनी कोई राय न हो।

इस दुनिया में हर आदमी पहले ही दिन से अल्लाह का दिया खा रहा है बल्कि दुनिया में आने से पहले भी वह अल्लाह का दिया ही खाता रहा है क्योंकि अपनी माँ के पेट में भी तो अल्लाह का दिया ही खा रहा था। हर आदमी का तजुर्बा है कि वह जब से इस दुनिया में है तब से अल्लाह का दिया ही खा रहा है और आराम से जी रहा है लेकिन अगर अचानक एक आदमी आकर एक लेटर दे दे जिसमें लिखा हो कि कल से आप आफ़िस या नौकरी पर मत आइएगा तो आदमी का क्या होगा? अपना दिल थाम कर बैठ जाएगा क्योंकि उसकी नौकरी हाथ से जा रही है। अब क्या होगा? कोई इस मुसलमान से पूछे कि तुम्हारी नौकरी गई या अल्लाह गया? तुम्हारी नौकरी गई या अल्लाह का ख़ज़ाना ख़ाली हो गया? हर सवाल का जवाब नहीं में ही मिलेगा मगर फिर भी अंदर से दुखी होगा क्योंकि अब वह कल के बारे में सोच-सोचकर मरा जा रहा है कि अब रोज़ी-रोटी का क्या होगा?

यह आदमी इतनी जल्दी भूल जाता है कि जो पैदा होने से अब तक खिला रहा है और जो माँ के पेट में भी खिला रहा था वही अब भी खिलाएगा। शैतान ने जैसे ही बहकाना शुरू किया वैसे ही न अल्लाह याद रहता है, न अल्लाह का वादा। सब कुछ ख़त्म हो जाता है।

ऐसा इसलिए है क्योंकि आदमी अपने आसपास की चीज़ों पर आँख बंद करके भरोसा कर लेता है और जिसने इन सारी चीज़ों को बनाया है उसी को भूल जाता है। ऐसे किसी भी आदमी के पास तवक्कुल नहीं है और न ऐसा आदमी अल्लाह पर भरोसा करने वाला है।

अल्लाह ने रोज़ी-रोटी का वादा किया है, नौकरी का वादा नहीं किया है। इसलिए आदमी धोखे में न रहे। उसने पैदा किया है तो वह खिलाएगा भी लेकिन उसने नौकरी का वादा किसी से नहीं किया है। इंटरव्यु दिया लेकिन फ़ेल हो गए और अब सोच रहे हैं कि अल्लाह ने तो वादा किया था कि हम तुम्हारे साथ हैं। फिर कैसे फ़ेल हो गए?

जबकि सही बात यह है कि आदमी को अल्लाह पर भरोसा रखना चाहिए कि अगर नौकरी मिलेगी तब भी अल्लाह ही खिलाएगा और नहीं मिलेगी तब भी वही खिलाएगा मगर आदमी दिमाग़ में इतनी जगह तो बनाए और इस बात को भी तो समझे कि उसके साथ-साथ दूसरों को भी जीने का हक़ है।

दुनिया के सारे काम, सारी नौकरियाँ या सारे कोरोबार ऐसे हैं जिनकी एक लिमिट होती है। नौकरी करने वाला 55 साल के बाद रिटायर हो जाता है और जो किसी कालेज में पढ़ाता है वह 60 साल के बाद रिटायर हो जाता है यानी हर जगह नौकरी भी होती है और एक दिन नौकरी ख़त्म भी हो जाती है। कारोबार भी होता है और ख़त्म भी हो जाता है। अब अगर किसी से पूछा जाए कि यह साहब 60 साल से काम कर रहे हैं और इनके पास 30 साल का अच्छा तजुर्बा भी है, फिर इन्हें क्यों रिटायर कर दिया? जवाब यही मिलेगा कि अगर इनको रिटायर नहीं करेंगे तो वह जो 30 साल का जवान युनिवर्सिटी से पढ़कर निकला है उसका क्या होगा? हर हुकूमत कहती है कि हमें बस इन्हीं को

नहीं देखना है बल्कि अगली पीढ़ी को भी देखना है। अगर पुराने वालों को रिटायर नहीं किया जाएगा तो नए वालों को कहाँ से नौकरी मिलेगी? दुनिया की हर हुकूमत की यही पॉलिसी है। हर आदमी यही कहता है कि इनको नहीं हटाया जाएगा तो आगे वालों को कैसे पाला जाएगा मगर जिसको एक बार जगह मिल जाए वह फिर दूसरे बेरोज़गारों के बारे में सोचता भी नहीं है। अब क्या अल्लाह भी बन्दों के साथ इतना ही मतलबी हो जाए? जबकि वह तो सबका पालने वाला है। अगर चार जगहें हों और चार आदमी बैठ जाएं, फिर हटने का नाम ही न लें तो पांचवाँ कहाँ बैठेगा? क्या वह चार का अल्लाह है, पाँचवें का अल्लाह नहीं है? इसीलिए जैसे ही दुनिया में शोर मचता है कि आदमी बढ़ते जा रहे हैं और ज़मीन घटती जा रही है, सब कहाँ समाएंगे तो अचानक बाढ़ आती है और न जाने कितने लोग सागर में समा जाते हैं। जो दुनिया को चलाने वाला है वह हम से अच्छी तरकीब जानता है। दुनिया को चलाना आदमी का काम नहीं है। आदमी तो अगर दो बच्चे ही पाल ले तो यही बहुत बड़ा काम है।

कहीं भी चले जाइए हर जगह आदमी के ईमान में यह कमज़ोरी पाई जाती है कि कल क्या होगा? अगर नौकरी चली गई तो क्या होगा? दुकान बंद हो गई तो क्या होगा? कारोबार फ़ेल हो गया तो क्या होगा? हर एक कल के बारे में सोच रहा है। उधर दीन को भी भला ऐसे लोगों से क्या उम्मीद होगी जिन्हें हर एक पर भरोसा है और अगर नहीं है तो बस अल्लाह पर भरोसा नहीं है। न दीन ऐसे लोगों के बल पर आया है और न ऐसों के सहारे चला है।

आज की औरत का यह हाल है कि अगर मियाँ थोड़े से पैसे देकर कहीं नौकरी के लिए जाना चाहे तो जाने नहीं देती कि इतने से पैसों में क्या होगा और अगर वहाँ नौकरी नहीं मिली तब तो और बुरा हो जाएगा लेकिन इसके मुक़ाबले में हज़रत इब्राहीम[अ०] की बीवी जनाबे हाजरा को देखिए कि हज़रत इब्राहीम[अ०] ने जाना चाहा तो अल्लाह पर भरोसा करके आसानी से जाने दिया। चले गए और यहाँ बच्चे को प्यास लगने लगी।

हाजरा पानी ढूँढ रही हैं कि कहीं से दो घूँट पानी मिल जाए ताकि मेरा बच्चा बच जाए। हाजरा ने अल्लाह पर भरोसा किया था और उसने भी उनके भरोसे का पूरा मान रखा। दो घूँट पानी देने के बजाए ज़मज़म का पूरा कुंआ दे दिया। हाजेरा ने अपने बच्चे के लिए थोड़ा सा पानी मांगा था लेकिन अल्लाह ने इतना दिया कि आज तक दुनिया पी रही है लेकिन कम होने का नाम नहीं लेता। यह बस अल्लाह पर हाजरा के भरोसे का बदला है और कुछ नहीं है।

इसी लिए लाखों लोगों के अच्छे कामों को अल्लाह ने वह जगह नहीं दी जो जनाबे हाजरा के काम को दे दी कि हज में हाजरा की दौड़ को क़यामत तक के लिए मुसलमानों पर वाजिब कर दिया ताकि हर एक को यह पता चल जाए कि अल्लाह चाहता है कि लोग मेहनत और काम करके अल्लाह पर भरोसा करें।

अल्लाह इतना करम करने वाला है और इतना हमदर्द है मगर फिर भी बन्दे को अपने पालने वाले पर भरोसा नहीं होता। कोई तजुर्बा न होता और भरोसा न होता तो फिर भी बात समझ में आती थी। अगर कोई किसी से कहे कि जिस दिन आपकी नौकरी हाथ से चली जाए उस दिन अपने सारे घर वालों को लेकर मेरे यहाँ चले आइएगा तो बात समझ में भी आती है कि जिसने कभी एक कप चाय के लिए भी न पूछा हो वह कह रहा है कि चले आइएगा मगर जिसने पहले ही दिन से रोज़ी-रोटी दी है उस पर भरोसा क्यों नहीं होता? क्यों नौकरी जाने से सब की जान निकल जाती है? क्यों कारोबार के टूटने से सब मरे जाते हैं? अल्लाह पर भरोसा करना चाहिए। उसके करम पर भरोसा करना चाहिए। अल्लाह के करम से बड़ी कोई चीज़ नहीं है। जब वह करम करने पर आता है तो दिलों को बदल देता है। अगर आज किसी को पता चल जाए कि कल उसे नौकरी से निकाल दिया जाएगा और फिर सारे घर वाले मिलकर दुआ करें तो तब भी उस आफ़िसर का फ़ैसला नहीं बदल सकते जो नौकरी से निकाल रहा है। फ़ैसले को बदल सकता है तो बस अल्लाह। जो लोग

ख़ाली हमदर्दी में दो आँसू बहा सकते हों भला उनका क्या भरोसा? यह लोग तो कुछ भी नहीं बदल सकते।

वह जो अपने आप को कह रहा था कि मैं ही सब से बड़ा ख़ुदा हूँ वह भी एक दूध पीते बच्चे के सामने बेकार दिखाई पड़ रहा था। माँ ने हज़रत मूसा[अ०] को एक बक्से में रखकर दरिया में बहा दिया और मौजें बच्चे को बादशाह फ़िरऔन के महल के पास ले आईं। बच्चा आया तो सब से बुरे दुश्मन के घर में आया और आने के बाद भी चैन से बैठा। यह नहीं किया कि रोते-रोते महल को सर पर उठा लिया होता कि उसके रोने से हमदर्दी हो जाती बल्कि बच्चे का खेल-तमाशा यही था कि एक तमांचा उसके मुंह पर इधर मारा और एक उधर से। फ़िरऔन सोच भी रहा था और अपनी रानी आसिया से कह भी रहा था कि कहीं यह वही बच्चा तो नहीं है जिसके बारे में सुना है कि यह हमारी राजगद्दी पलट देगा? वरना मुझे भला कौन तमांचा मारेगा? जनाबे आसिया ने कहा कि नहीं! नहीं! यह तो मेरा पाला हुआ बच्चा है। बच्चे तो ऐसा किया ही करते हैं। जो फ़िरऔन सत्तर हज़ार बच्चों को मार चुका था उसके दिमाग़ को भी अल्लाह ने उस रास्ते पर लगा दिया कि जिससे ख़तरा था वही बच्चा उसकी गोद में बैठा हुआ तमांचे मार रहा था मगर फ़िरऔन सोच रहा था कि यह वह बच्चा नहीं है।

इसके बाद तो समझ लेना चाहिए कि अल्लाह ही दिमाग़ों और दिलों को बदलने वाला है। क्यों दूसरों पर भरोसा किया जाता है और क्यों अल्लाह पर भरोसा नहीं किया जाता?

अल्लाह पर तवक्कुल (भरोसा) न होने की वजह से ही आज हर आदमी दुखी है, हर आदमी अपनी ज़िन्दगी से परेशान है, हर आदमी अपने आने वाले कल को लेकर उलझन में है कि आज तो सब कुछ ठीक-ठाक है मगर कल क्या होगा? यह कल की चिन्ता ही इस बात की निशानी है कि अल्लाह पर भरोसा नहीं है वरना कल बस अल्लाह के हाथ में है और किसी के हाथ में नहीं है। जिन लोगों पर आदमी भरोसा करता है ख़ुद उन्हीं के कल का नहीं पता कि क्या होगा। कभी आदमी यह भी सोचे कि वह

जिन लोगों पर भरोसा कर रहा है अगर वही चल बसे तो क्या होगा ?

हर आदमी अपने कल की नौकरी को लेकर दुखी है। अब अगर इस बीच रात में मौत का फ़रिश्ता आ जाए तो क्या होगा ? मौत भी तो अल्लाह के ही हाथों में है। हो सकता है कि कल तक नौकरी से निकालने वाले को ही मौत आ जाए। आदमी दूसरी तरफ़ से क्यों नहीं देखता है ? बस वही चीज़ क्यों देखता है जो शैतान दिखाना चाहता है ? उस तरह से क्यों नहीं देखता जिस तरह से क़ुरआन दिखाना चाहता है ? इस्लाम दिखाना चाहता है ?

इसलिए आदमी का सब से बड़ा कमाल यह है कि वह अल्लाह पर भरोसा करे। अगर ऐसा न हो सके तो फिर उसकी तौहीद कमज़ोर है।

जो लोग अल्लाह पर भरोसा करते हैं वह दुनिया में किसी भी चीज़ से नहीं घबराते क्योंकि वह जानते हैं अल्लाह है उनके साथ है। सारी दुनिया भी दुश्मन हो जाए तो कुछ नहीं बिगाड़ सकती ?

इमाम हुसैन[अ०] ने दुआए अरफ़ा में यही कहा था कि ऐ अल्लाह! जिसने तुझे पा लिया उसने क्या खोया और जिसने तुझे खो दिया उसने क्या पा लिया ?

हमें अल्लाह के ऊपर इतना भरोसा होना ही चाहिए कि हमें पता हो कि अल्लाह के होते हुए दुनिया भर की ताक़तें भी कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं।

(10)

अल–हम्दुलिल्लाह

अल–हम्दुलिल्लाह। यह वह बात है जिसे हर मुसलमान दिन भर में हर वक़्त दोहराता है।

जिस तरह सारा मुल्क अल्लाह के लिए है, जिस तरह सारे सजदे अल्लाह के लिए हैं और जिस तरह सारी इबादतें अल्लाह के लिए हैं उसी तरह सारी हम्द (प्रशंसा) भी बस अल्लाह के लिए ही है।

हज़रत अली[अ०] ने अपने भाई इब्ने अब्बास से कहा था कि जो कुछ सारी आसमानी किताबों में है वह सब का सब अल्लाह ने क़ुरआन में रख दिया है और जो कुछ क़ुरआन में है वह सब सूरए हम्द में आ गया है।

इसका मतलब यह है कि सूरए हम्द का कमाल यह है कि अगर सारे क़ुरआन का निचोड़ देखना हो तो इसी एक सूरे में देखा जा सकता है।

पूरे सूरए हम्द में बस दो चीज़ें पाई जाती हैं। सूरए हम्द का पहला हिस्सा शुरू होता है अल्लाह की हम्द (तारीफ़) सेः

> सारी तारीफ़ें बस अल्लाह के लिए हैं जो सारी दुनियाओं का मालिक है।

वह रहमान भी है और रहीम भी।

वह क़यामत के दिन का मालिक है।

यहाँ तक अल्लाह की हम्द यानी उसकी प्रशंसा है।

अल्लाह की हम्द करने के बाद बन्दा अब तक की बात का निचोड़ दुनिया के सामने रखता है कि चूँकि वह अल्लाह है, सारी दुनियाओं का मालिक है, रहमान व रहीम है और क़यामत का मालिक है इसलिए बस उसी के सामने सर झुकाया जा सकता हैः

हम तेरी ही इबादत करते हैं और तेरे ही सामने हाथ फैलाते हैं।

जब सारी दुनिया तेरी है तो फिर किसी दूसरे के आगे कैसे हाथ फैलाएं?

यहाँ तक सूरए हम्द का पहला हिस्सा है। इसके बाद से दूसरा हिस्सा शुरू होता हैः

ऐ अल्लाह! हमें सीधा रास्ता दिखा!

जो उन लोगों का रास्ता है जिन्हें तूने अपनी नेमतें दी हैं, उनका रास्ता नहीं जिन पर ग़ज़ब[1] नाज़िल हुआ है या जो बहके हुए हैं।

इसका मतलब यह है पूरे सूरए हम्द के अंदर बस दो ही चीज़ें हैंः एक अल्लाह की हम्द और दूसरी दुआ।

बन्दा दुआ मांगता है कि हमें सीधा रास्ता दिखा, उन लोगों का रास्ता जिन पर तूने नेमतें उतारी हैं, उनका रास्ता नहीं जो रास्ते से भटक गए और जो तेरे ग़ज़ब का शिकार हो गए।

पूरे क़ुरआन में जो कुछ बन्दों को सिखाया गया है वह सब का सब इन दो चीज़ों में समेट दिया गया है जिन में से एक का नाम है अल्लाह की हम्द है और दूसरी का नाम दुआ है।

यही वह जगह है जो हमारे समझने की है क्योंकि यहीं से मुसलमानों का रास्ता इस्लाम और क़ुरआन से अलग हो गया है। यह तो सब जानते हैं कि हमारी ज़िन्दगी में हम्द भी है और दुआ भी है मगर हमारी ज़िन्दगी का नक़्शा उल्टा है क्यों पहले

---

[1] प्रकोप

हम अल्लाह से दुआ मांगते हैं और जब वह दे देता है उसके बाद उसकी हम्द करते हैं और उसका शुक्र करते हैं।

इसके उलट क़ुरआन ने जो मुसलमानों की ज़िन्दगी का नक़्शा बनाया है उसमें पहले शुक्र है और फिर दुआ। यानी पहले *अल-हम्दुलिल्लाह* है और फिर *एहदिनस सि-रा-तल मुस्तक़ीम* है।

क्या आसानी से किसी के दिमाग़ में यह बात आ सकती है कि आदमी पहले शुक्र करे और उसके बाद दुआ मांगे। आदमी सोचेगा कि शुक्र किस बात का करें, अभी तो कुछ मिला ही नहीं है। पहले मिले तो शुक्र करें मगर क़ुरआन एक दूसरी ही बात कह रहा है जिस पर मुसलमान चलते ही नहीं हैं।

इमाम[अ०] के पास एक आदमी आया। उसने कहा कि मैं एक बात जानना चाहता हूँ। क़ुरआन में दो आयतें ऐसी हैं जो मेरी समझ में नहीं आती हैं। इमाम ने कहा कि कौन सी आयतें? उसने कहा कि एक जगह अल्लाह फ़रमाता है कि "मुझ से मांगो मैं तुम्हारी दुआ पूरी करूँगा।" जबकि हमारा तजुर्बा यह है कि हम सैकड़ों दुआएं मांगते हैं और एक भी पूरी नहीं होती। हज़ारों में कोई एक दुआ पूरी हो जाए तो हो जाए वरना सुबह से लेकर रात तक आदमी दुआ ही मांगता रहता है मगर कोई दुआ पूरी नहीं होती। इस आयत का मतलब बताइए!

यह भी शुक्र करने की जगह है कि चौदह सौ साल पहले हमारी ब्रादरी के लोग पैदा हो गए थे वरना अगर सब आज ही पैदा होते तो इन सवालों के जवाब कौन देता? यह सवाल बस उसी दौर का नहीं है बल्कि हर दौर का है। जो भी क़ुरआन की इस आयत को पढ़ेगा और फिर अपनी हालत को देखेगा तो फ़ौरन यही सवाल करेगा।

फिर उस आदमी ने कहा कि क़ुरआन की दूसरी आयत जो मेरी समझ में नहीं आती वह यह है कि अल्लाह ने क़ुरआन में वादा किया है कि अगर तुम हमारे नाम पर ख़र्च करोगे हम तुम्हें उसका अच्छा बदला देंगे यानी अगर एक लगाओगे तो हमारी तरफ़ से दस मिलेंगे। जबकि हम न जाने अल्लाह के नाम पर कितना लगा चुके हैं मगर बस जा ही रहा है, उधर से आता कुछ भी नहीं है।

काश! उस आदमी ने इसी को उलट कर सोच लिया होता कि अगर अल्लाह ने वादा किया है तो दो ही रास्ते बचते हैंः या तो माना जाए कि अल्लाह का वादा, वादा नहीं है या यह कहा जाए कि हमारी दुआ, दुआ नहीं है। जब अल्लाह ने कहा है कि तुम दुआ मांगो, हम तुम्हारी दुआ पूरी करेंगे तो क्या हमारी दुआ, दुआ नहीं है या उसका वादा, वादा नहीं है। बन्दा यह कहने की हिम्मत नहीं कर सकता कि अल्लाह ने अपना वादा पूरा नहीं किया और यह भी नहीं मान सकता कि हमारी दुआ, दुआ नहीं है। कोई तो कमज़ोरी ज़रूर होगी जिसकी वजह से दुआ, दुआ ही नहीं रही है वरना अल्लाह अपने वादे को नहीं तोड़ता है।

अब इमाम[अ०] ने उसका जवाब देना शुरू किया तो उसने कहा कि क्या दुआ करने का भी कोई ख़ास तरीक़ा होता है? इमाम ने कहा कि वही तरीक़ा है जो क़ुरआन ने बताया है। उसने पूछा कि क़ुरआन में क्या तरीक़ा बताया गया है? इमाम ने कहा कि पहले अल्लाह की हम्द करो और उसके बाद दुआ मांगो यानी पहले अपनी बन्दगी को साबित करो और उसके बाद दुआ करो। यह वही चीज़ है जो सूरए हम्द ने हमें सिखाई है क्योंकि सूरए हम्द *अल-हम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन* से शुरू होता है यानी पहले अल्लाह का शुक्र। फिर *इय्या-क ना-बुदु व इय्या-क नस्-त-ईन* यानी हम तेरी इबादत करते हैं और तुझ से मदद मांगते हैं।

इसके बाद दुआ का नम्बर आता है कि *एह्दिनस सि-रा-तल मुस्तक़ीम* यानी हमें सीधा रास्ता दिखा। पहले अल्लाह का शुक्र, उसके बाद इबादत की बात, फिर अल्लाह के सामने हाथ फैलाने की बात और फिर आख़िर में दुआ।

अगर आदमी क़ुरआन का पहला पेज ही ठीक से पढ़ ले तो उसे दुआ मांगने का तरीक़ा आ जाएगा। आदमी जब क़ुरआन के बताए तरीक़े से दुआ मांगेगा तभी तो उसकी दुआ पूरी होगी।

इस फ़ार्मूले को ध्यान में रखा जाए तो उस आदमी के दूसरे वाले सवाल का जवाब भी मिल जाएगा जिसमें उसने कहा था कि हम अल्लाह के नाम पर इतना ख़र्च करते हैं और अल्लाह ने कई गुना बढ़ाकर वापस करने का वादा भी किया है मगर हम ने वापस आते कभी नहीं देखा।

अगर अल्लाह की तरफ़ से वापस नहीं आ रहा है तो इसका मतलब बस यही है कि हमारी तरफ़ से कुछ न कुछ ख़राबी ज़रूर है। इसलिए हमें अल्लाह के ऊपर सवाल उठाने के बजाए अपने आप को ठीक करना चाहिए।

अब इसका एक नमूना भी देख लेते हैं कि जहाँ देने वाले ने दिया और अल्लाह ने भी उसे दे दिया। मिसाल क़ुरआन की ही है। सूरए दहर में सारी कहानी लिखी हुई है। देने वालों ने एक दिन अपना खाना एक यतीम को खिलाया, अगले दिन एक ग़रीब को खिलाया और तीसरे दिन क़ैदी को खिलाया और देने वालों में से किसी ने कहा भी नहीं कि हम ने अल्लाह के लिए दिया है बल्कि इस बात का एलान ख़ुद अल्लाह ने किया है कि तीन दिनों तक दिया जाने वाला यह खाना अल्लाह के नाम पर दिया गया था। जन्नत और कौसर की बात तो बाद में आएगी, कुछ रोटियों के बदले में क़ुरआन का पूरा सूरा उतर आया, यह अल्लह का दिया हुआ बदला ही तो है?

इसलिए अगर काम में कमज़ोरी पाई जाती है तो अपने काम को ठीक करना चाहिए। अल्लाह पर उंगली नहीं उठाना चाहिए।

अगर आदमी का काम ठीक हो तो अल्लाह यहाँ भी देता है और वहाँ भी देता है।

अब आइए! इस मिसाल को देखते हैं। एक साहब ने हम से कहा कि आपका उनके साथ अच्छा उठना-बैठना है, अगर आप उनसे कह दें तो मेरा काम हो जाएगा। हम ने कहा कि आप कहते हैं तो हम कह देंगे। दुनिया में यही तरीक़ा चल रहा है, भला अल्लाह को कौन परेशान करे, सब बन्दों से ही काम चला लेते हैं। वह साहब मिले तो मैंने उन से कह दिया और यह भी कह दिया कि उन्होंने पहली बार मुझ से कुछ कहा है इसलिए उनका काम करा दीजिएगा। उन्होंने पलट कर कहा कि ठीक है, मैं करा दूँगा। वक़्त बीत गया और दस दिन के बाद वह साहब आकर बोले कि अभी तक मेरा काम तो हुआ ही नहीं है। हम ने कहा कि भाई! मैंने तो आपके सामने ही उनसे कह दिया था और उन्होंने वादा भी किया था कि काम हो जाएगा। हम ने कहा कि कहीं मिलेंगे तो हम उनसे ज़रूर पूछेंगे कि क्या हुआ? अचानक

वह एक जगह दिखाई पड़ गए। हम ने कहा कि ज़िन्दगी में पहली बार आपसे किसी काम के लिए कहा था मगर वह काम भी आप न कर सके। वह बोले कि कौन सा काम? हम ने कहा कि उनके बच्चे की नौकरी का फ़ार्म था, आप को उसके ऊपर साइन करके बस एक नौकरी देना थी। वह भी आप नहीं कर सके। वह बोले कि आख़िर वह फ़ार्म कहाँ है जिस पर हमें एप्वाइंटमेंट लेटर देना है। हम ने कहा कि फ़ार्म तो आपके ही पास होगा। बोले कि नहीं! उन्हीं से पूछिएगा कि कहाँ है? हम ने उनसे पूछा कि क्या आपने उन्हें फ़ार्म दे दिया था? बोले कि हम ने आपसे तो कह ही दिया था, उसके बाद भला फ़ार्म देने की क्या ज़रूरत थी। हम ने कहा कि आप भी बड़े अजीब आदमी हैं। आप फ़ार्म दीजिए तभी तो आगे की कारवाई होगी। मेरा कहने का बस इतना ही असर होगा कि आपका काम हो जाएगा लेकिन पहले उनके पास फ़ार्म तो पहुँचे।

दुआए कुमैल में हज़रत अली[अ०] हमें यही बात समझा रहे हैंः

> पालने वाले! मेरे उन गुनाहों को माफ़ कर दे जो दुआओं को क़ैद कर देते हैं।

यानी कुछ गुनाह ऐसे भी हैं जो दुआ को अल्लाह तक पहुँचने ही नहीं देते और यह बात हमें उसी अली[अ०] ने बताई है जिसे हम ने दुआ पूरी कराने के लिए अपना वसीला बनाया था।

अब वही हज़रत अली[अ०] पलट कर कहेंगे कि फ़ार्म पहुँचा देना तुम्हारा काम है और उसके बाद मंज़ूर कराना हमारा काम है यानी दुआ के पूरा होने की शर्त यह है कि पहले उन गुनाहों को छोड़ो जो दुआ को अल्लाह तक पहुँचने ही नहीं देते। पहले ख़ुद को गुनाहों से पाक कर लो उसके बाद हम दुआ पूरी करवा देंगे।

अब हो सकता है कि कोई पूछ बैठे कि ठीक है कि पहले शुक्र किया जाए और उसके बाद दुआ लेकिर शुक्र करें किस चीज़ का? जब अल्लाह हमें देगा तभी तो हम उसका शुक्र करेंगे मगर जब अभी दुआ ही नहीं मांगी और मिला भी नहीं है तो फिर शुक्र कैसा और किसी चीज़ के लिए?

यह है आदमी की नासमझी कि अगर उसे नौकरी न मिले तो समझता है कि जैसे कुछ मिला ही नहीं है। जब अल्लाह ने

ज़िन्दगी दी तो तब नहीं सोचा कि कुछ मिल गया है। असल में आदमी को पता ही नहीं है कि दुआ और शुक्र है क्या।

यह जो आदमी दुआएँ पूरी न होने पर अल्लाह को बुरा-भला कहने लगता है, कोई ज़रा इससे पूछे कि अगर मुर्दा होते तो क्या शिकायत कर पाते? आदमी तो शिकायत ही इसलिए कर पाता है क्योंकि साँस ले रहा है। अगर गूँगा होता तो लोग खिल्ली उड़ाते और कोई सुनने के लिए तैयार न होता, फिर शिकायत कहाँ से करता। आख़िर में अपने आप ही चुप हो जाता। इसका मतलब यह है कि ज़बान चल रही है जभी तो शिकायत कर पा रहा है, साँस आ रही है जभी तो शिकायत कर पा रहा है, शिकायत करना जानता है तभी तो शिकायत कर पा रहा है, दुआ मांगना जानता है तभी तो दुआ मांग रहा है। आदमी जो अल्लाह से दुआएं पूरी न होने की शिकायत कर रहा है उसकी शिकायत से पहले इतनी सारी चीज़ें हैं जिनका उसे पता ही नहीं होता। इतना सब कुछ तो अल्लाह ने पहले से ही दे रखा है। अगर नहीं है तो बस एक नौकरी नहीं है। आदमी कितना बेशर्म है। ज़िन्दगी जैसी अनमोल पूँजी लेकर शुक्र नहीं करता मगर बेहयाई के साथ नौकरी मांगता है। अगर पलट कर अल्लाह कह दे कि इतना देकर देख लिया, उसके बदले में तुम ने क्या किया? साँसें दीं, तुम ने क्या किया? ज़बान दी उसके बदले में तुम ने क्या किया? बोलने की ताक़त दी, उसके बदले में क्या किया? जो इतना सब कुछ लेकर भी ''अल-हम्दुलिल्लाह'' कहना न जानता हो उसे अब और क्या दिया जाएगा? इसी बात को आम बोल-चाल में कहते हैं कि पहले पुराना रिकार्ड ठीक करो, आगे की बात बाद में करना मगर जिसका पूरी ज़िन्दगी में रिकार्ड ही यह रहा हो कि उसे किसी भी एहसान का एहसास न हो उसे तो अपने कोई शिकायत करना ही नहीं चाहिए। इसीलिए क़ुरआन ने कहा है कि पहले हम्द[1] व शुक्र और उसके बाद दुआ।

पहले अल्लाह का शुक्र करो और उसके बाद दुआ मांगो ताकि पता चल जाए कि एहसानों को भूल जाने वाले नहीं हो। अल्लाह ने जो कुछ दिया है उसका शुक्र करते हुए आगे की चीज़ें मांग

---

[1] प्रशंसा

रहे हो। अल्लाह ने तो इतना भी बिना मांगे ही दे दिया था। अगर वह तुम्हारे मांगने का इन्तेज़ार करता तो तुम्हें ज़िन्दगी ही न देता या हाथ-पाँव, आँख, नाक और कान ही न देता। उसने हम से मांगने के लिए बस इसलिए कहा है ताकि हमारा दिमाग़ न ख़राब न हो जाए और हम घमंडी न हो जाएं।

अब हमारे सामने दो चीज़ें हैंः एक हमारी दुआ और दूसरे अल्लाह का दुआ पूरा करना। यह दोनों साथ-साथ चलते हैं यानी हम दुआ करते हैं और अल्लाह हमें देता है।

किसी से पूछा गया कि दुआ बड़ी चीज़ है या दुआ का पूरा होना? हर आदमी यही कहेगा कि दुआ बड़ी चीज़ है लेकिन उस आदमी ने कहा कि इन दोनों में फ़र्क़ यह है कि जब तब बन्दा दुआ मांगता रहता है तब तक उसका दिल अल्लाह से जुड़ा रहता है मगर जैसे ही उसकी दुआ पूरी हो जाती है वैसे ही बन्दा अल्लाह से मुँह फेर लेता है। यानी जब तक यह नहीं पता होता कि आफ़िस से इस महीने का चेक आएगा या नहीं, तब तक तो बस अल्लाह ही अल्लाह करता रहता है लेकिन जैसे ही चेक मिल जाता है वैसे ही बैंक से पैसे निकाल कर फिर से मौज-मस्ती में लग जाता है। अब न कहीं अल्लाह दिखाई पड़ रहा है और न कहीं उसका रसूल।

यह आदमी की कमज़ोरी है और इसीलिए जब तक वह दुआ की हालत में रहता है तब तक उसका चेहरा अल्लाह की तरफ़ रहता है लेकिन जैसे ही अल्लाह उसकी सुन लेता है फ़ौरन ही उसका मुँह फिर जाता है।

अब ऊपर वाले सवाल का जवाब आसानी से समझ में आ सकता है। क्या यह बड़ी चीज़ है कि बन्दा अल्लाह से लौ लगाए रहे या यह बड़ी चीज़ है कि बन्दा अपनी दुनिया में मगन हो जाए? जो लोग दुआ और दुआ के पूरा होने के फ़र्क़ को समझते हैं वह दुआ के मज़े को भी समझते और पहचानते हैं।

दुआ आदमी को अल्लाह से जोड़े रखती है मगर दुआ पूरी हो जाए तो वह अल्लाह की तरफ़ से अपना ध्यान हटा लेता है। इसलिए आदमी को दुआ की क़ीमत को समझना चाहिए। हम बस

अल्लाह से कुछ लेने के लिए दुआ करते हैं लेकिन जो लोग दुआ के मज़े को पहचानते हैं उन्हें अल्लाह सब कुछ दे देता है।

कौन जाने कि अल्लाह की बारगाह में हाज़िर रहने में क्या मज़ा मिलता है। हम इस मज़े को नहीं पहचान सकते क्योंकि अभी हम ने अभी अल्लाह को पहचाना ही नहीं है।

बहरहाल सारी दुनिया का नक़्शा यह है कि पहले दुआ और उसके बाद अल्लाह का शुक्र जबकि क़ुरआन इस से बिल्कुल हटकर बात करता है कि पहले शुक्र और उसके बाद दुआ। इसीलिए सूरए हम्द में शुक्र भी है और दुआ भी यानी *अल-हम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन* शुक्र है और *एहदिनस सि-रा-तल मुस्तक़ीम* दुआ है और यही सारा क़ुरआन है। जब ऐसा है तो फिर अल्लाह ने इस सूरे को किसी ख़ास वक़्त के लिए रखा होता। जब भी शुक्र करना होता तो या दुआ मांगना होती तो सूरए हम्द पढ़ लिया करते लेकिन यह अकेला ही ऐसा सूरह है तो हर मुसलमान पर वाजिब है क्योंकि और किसी भी सूरे को अगर हफ़्ता-हफ़्ता भर न भी पढ़ें तो कोई गुनाह नहीं है। अगर दो वक़्त बीत जाएं और कोई सूरए हम्द न पढ़े तो गुनाह भी करेगा और जहन्नम में भी जाएगा यानी यही एक वह सूरह है जो दिन भर की पाँचों नमाज़ों में पढ़ना वाजिब है। इसका मतलब यह है कि हर काम का अपना कोई वक़्त हो सकता है लेकिन न शुक्र का कोई वक़्त तय है और न दुआ का। सुबह दुआ, दोपहर दुआ, शाम दुआ, रात में दुआ, आधी रात को दुआ और इसी तरह सुबह से लेकर शाम तक शुक्र, रात के सन्नाटे में शुक्र। हर वक़्त शुक्र और हर वक़्त दुआ। शुक्र और दुआ का न कोई दिन है और न कोई टाइम।

इसीलिए सूरए हम्द हर मुसलमान पर वाजिब किया गया है ताकि हर पल अल्लाह के शुक्र और दुआ में बीते। बस शर्त यह है कि दुख का वक़्त हो तो ख़ुशी की दुआ मत करो। अगर किसी के यहाँ मौत हो जाए तो ख़ुशी जैसे किसी की शादी की दुआ नहीं करना चाहिए लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं कि आदमी दुआ ही न करे। दुआ करे लेकिन मरने वाले के लिए दुआ करे। दुआ तो हर हाल में करना है लेकिन वक़्त देखकर।

यहाँ तक कि अगर कोई दुश्मन हो तो उसके लिए भी दुआ करना चाहिए।

अल्लाह के रसूल[स०] जंग के मैदान में हैं और चारों तरफ़ दुश्मनों की तलवारें चमक रही हैं लेकिन अल्लाह के रसूल[स०] के होंठों पर यह दुआ हैः ऐ अल्लाह! मेरी क़ौम को सही रास्ता दिखा दे। यह लोग मुझे पहचानते नहीं हैं।

यह दुआ ही तो है।

अल-हम्दुलिल्लाह यानी सारी तारीफ़ें व हम्द बस अल्लाह के लिए है। क़ुरआन खोलते ही सब से पहले पढ़ने वाले के सामने यही बात आती है कि सारी तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं।

अब एक सवाल यह है कि अल्लाह के मायनी क्या हैं?

अल्लाह उस हस्ती का नाम है जिसके पास सारे कमाल हैं और जिसमें किसी भी तरह की कोई कमी नहीं पाई जाती है।

यहाँ तक कि उसमें कोई ऐसी कमज़ोरी भी नहीं है जैसी हम जैसों में होती है कि जेब में एक लाख का चेक था। किसी पर तरस आ गया और वह चेक उसे दे दिया। पहले देने वाला पहले लखपती था लेकिन अब लेने वाला लखपति हो गया। देने और लेने वाले के बीच फ़र्क़ यह है कि यह चेक देने वाली की गाढ़ी कमाई का था यानी देने वाले का अपना था। लेने वाले को मिला तो उसका हो गया लेकिन किसी दिया हुआ है, उसने कमाया नहीं है। अगर देने वाला न देता तो उसकी जेब जैसे पहले ख़ाली थी वैसे ही ख़ाली रहती। यह हम इन्सानों की बात है।

अल्लाह उस हस्ती का नाम है जिसमें कोई कमी नहीं पाई जाती है। अगर अल्लाह सारा कमाल भी किसी को दे दे तब भी जो कुछ मिलेगा वह अल्लाह का दिया हुआ होगा।

अल्लाह का सारा कमाल अपना कमाल है लेकिन बन्दा वह है जिसके पास सब कुछ अल्लाह का दिया हुआ है।

क़ुरआन ने सब से पहली बात हमें यही सिखाई है कि सारी हम्द और सारी तारीफ़ें बस अल्लाह के लिए हैं, वह अल्लाह जो कमाल वाला है, ऐसा कमाल वाला कि हर कमाल उसके पास है और उसके अंदर किसी भी तरह की कोई कमज़ोरी नहीं है।

*****